Digamber Jain—Surat. Regd. No. B-744.

वीर सं० २४४९
वैशाख।
विक्रम सं. १९७९

संपादक—
मूलचंद किसनदास कापड़िया—सूरत।

वर्ष १६ वां
अंक ७वां
ई. सन् १९२३

विषयानुक्रमणिका।

SHREE JAIN LIBRARY
No.—
SIRCHI. STATE
Date........19
WESTERN RAJAPUTTANA

नं०	विषय	पृष्ठ
१	सम्पादकीय वक्तव्य	१
२	जैनमित्र और ब्रह्मचारीजी (पं० देवेन्द्रकुमार गोधा)	२
३	जैनसमाचारसंग्रह	४
४	भारतीय दर्शनोंमें जैन दर्शनका स्थान (बा० कामताप्रसादजी)	९
५	हम दीर्घजीवी कैसे हो सकते हैं (वैद्य)....	२१
६	क्या चाहिए ? (वैद्य)....	२४
७	अधोगति के उन्नति (गुजराती जैनबंधु)	२५
८	पथिककी दो बातें (के० पी० जैन)	३१

पेशगी वार्षिक मूल्य रु० १-१२-० पोस्टेज सहित।

नांदगांवमें बम्बई प्रां० सभा।

नांदगांव (नासिक)में वैशाख सुद १-२ ३-४ को वेदी प्रतिष्ठा व मेलेके समय बम्बई दि० जैन प्रां० सभा व महाराष्ट्र प्रा० दि० जैन खंडेलवाल सभाका संयुक्त अधिवेशन हुआ था जिसमें प्रांतिक सभाके शेठ जीवराज गौतम चंद दोशी सोलापुर व खंडेलवाल सभाके पं० पन्नालालजी सोनी सभापति हुए थे। एक तो प्रांतिक सभा व दूसरी जातीय सभा दोनोंका संयुक्त अधिवेशन हो ही नहीं सकता तथा संयुक्त हो तौ भी एक सभामें दो सभापति किसी भी अवस्थामें नहीं होसकते तौ भी संयुक्त अधिवेशन करके दो सभापति किये गये। यहां खंडेलवालोंके सिवाय दूसरे तो इनेगिने ही महाशय उपस्थित होंगे और सबजेक्ट कमेटीके मेम्बर खंडेलवाल थे या अन्य जातिय भी उसमें सामिल थे यह मालूम नहीं हुआ। सभामें जो जो प्रस्ताव हुए हैं वे सब मामूलीही हैं व सिर्फ बम्बई प्रां० दि० जैन सभाकी प्रबंध कमेटीका नया चुनाव किया है। जिसमें जैनमित्रके संपादक ब्र० शीतलप्रसादजीके स्थानपर पं० बंशीधर शास्त्री सोलापुरको नियत किये हैं जिससे सारी समाजमें अशांति फैल रही है जिसका परिणाम अत्यंत बुरा आनेकी पूर्ण संभावना है।

सभाके प्रस्तावोंका सारांश इस प्रकार है—

(१) वीर सं० २४४८की रिपोर्ट पास।

(२) सेठ रामचंद नाथा, पं० मेवारामजी व रा० ब० माणिकचंदजी सेठीकी माताकी मृत्युका शोक।

(३) डॉ० गौडके विवाहबिलका घोर विरोध

(४) तीसरे प्रस्तावका जगह२ विरोध करना।

(५) धर्मरक्षा व देशकी दरिद्रता दूर करनेके लिये विदेशी वस्त्र पहरनेका त्याग करें व अन्य वस्तु भी जहांतक बने स्वदेशी ही उपयोगमें लावें।

(६) जहां २ मंदिरमें २० [illegible] वार्षिकसे अधिक आय हो उसकी अधिक आयका कमसे कम आधा भाग दूसरे मंदिरके जीर्णोद्धारमें खर्च करनेकी प्रेरणा।

(७) बालविवाह, वृद्धविवाह, कन्याविक्रयादि बंद करनेकी पंचायतोंको प्रेरणा।

(८) प्रबंध कमेटीका ११ सभासदोंका चुनाव इसमें जैनमित्रके संपादक ब्र० शीतलप्रसादजीके स्थानमें पं० बंशीधर शास्त्री सोलापुरको नियुक्त किये गये। इसका स्थानपर प्रबल विरोध हो रहा है।

(१०) कोलारसके मामलेपर ग्वालियर नरेशको धन्यवाद।

(११. १२) कुंथलगिरि व मांगीतुंगीका हिसाब प्रबंध ठीक करनेकी तीर्थक्षेत्र कमेटीको सूचना।

(१३) म्हैसुर सरकार श्रवणबेलगोलादिमें म्यू० उपसभापति चुननेका अधिकार प्रजाको न देकर भट्टारकको ही दें क्योंकि उनका ही अधिकार है ऐसी म्हैसुर सरकारसे प्रार्थना।

गृहस्थ धर्म–

दूसरीवार छप चुका है। बाइन्डिंग होकर तैयार होगया है। मू० १॥) सजिल्द १॥।)
मैनेजर, दिगम्बर जैन पुस्तकालय–सूरत

|| श्रीवीतरागाय नमः ||

दिगंबर जैन.

THE DIGAMBAR JAIN.

नाना कलाभिर्विविधश्च तत्त्वैः सत्योपदेशैस्सुगवेषणाभिः ।
संबोधयत्पत्रमिदं प्रवर्त्ततास्, दैगम्बरं जैन-समाज-मात्रम् ॥

वर्ष १६ वाँ.	वीर संवत् २४४९. वैशाख वि० सं० १९७९.	अंक ७.

सम्पादकीय वक्तव्य.

जैनमित्र।

हमारे पाठक अच्छी तरहसे जानते हैं कि हमारी बम्बई दि० जैन प्रांतिक सभाकी ओरसे 'जैनमित्र' नामक पाक्षिक पत्र १२ वर्षसे श्री जैनधर्मभूषण पूज्य ब्र० शीतलप्रसादजीके सम्पादकत्वमें प्रकट होरहा है जो करीब ६–७ वर्षसे तो सूरतसे साप्ताहिक रूपमें व हमारे प्रकाशकत्वमें प्रकट होता है।

जिसको हम प्रकट करते हैं उसकी प्रशंसा हम कैसे करसकते हैं परंतु इतना तो अवश्य प्रकट करना पड़ता है कि 'जैनमित्र' सारे हिंदके जैनियोंमें एक उच्च शैलीके पत्रका स्थान पा रहा है व दिनों दिन पूज्य ब्रह्मचारीजीका मान व आदर बढ़ा रहा है जो इनेगिने द्वेषी पंडितगण व उनके मुट्ठीभर शिष्योंसे सहन न होनेसे ब्रह्मचारीजी पर निर्लज्ज व झूठे आक्षेप कई दिनोंसे लगा रहे हैं और वे लोग इसी विचारमें थे कि ऐसी कोई कार्रवाई करे कि जिससे 'जैनमित्र' ही उनके हाथसे ले लेवें और अंतमें नांदगांव कि जहां खास केवल उनके अनुयायी खंडेलवाल ही सम्मिलित होनेवाले थे वहां प्रांतिक सभाका अधिवेशन खंडेलवाल सभाके साथ २ इस मासमें कराया व वहां ब्रह्मचारीजीका नाम जैनमित्रके संपादकत्वमेंसे निकाल देनेका प्रस्ताव किया गया है जबकि सभाके स्थायी सभापति सेठ हीराचंद नेमचंद, उपसभापति व कोषाध्यक्ष सेठ ताराचंद नवलचंद, उपसभापति सेठ सुखानंदजी तथा अन्य बहुतसे सभासद इस बातसे विरुद्ध हैं व ऐसा पत्र भी उन्होंने नांदगांव भेजा था तौभी वहां ऐसा प्रस्ताव हुआ है। अब विचार किया जाता है तो मालुम होता है कि अबतक नांदगांव सभाकी संपूर्ण कार्रवाई प्रकट नहीं हुई है तौ भी इतना स्पष्ट मालूम पड़ता है कि दो सभाके सभासद अलग२ आये होंगे तब सब्जेक्ट कमेटी अलग२ होनी चाहिये थी व एक प्रांतिक व एक जातीयका मेल कैसे बैठ सकता है इस लिये नांदगांवमें जो सभाकी कार्रवाई हुई है वह अनियमित ही मालुम पड़ती है। और जबसे जैनमित्र साप्ताहिक हुआ है तबसे नवीन चुनावके समय प्रकाशकका नाम चुना जाता है जो इसवार नहीं चुना गया है इससे प्रकाशक कोई भी नियत नहीं हुआ है और प्रकाशकके

विना सम्पादक क्या कर सकते हैं ?

दूसरी बात यह है कि बहुतसे सभासदोंसे हमें सूचना मिली है कि जहांतक नांदगांवके प्रस्तावपर मीटिंग होकर विचार न हो वहां तक आप ही जैनमित्रका कार्य चलाते रहें इसलिये अभी भी हम जैनमित्र पूर्व अवस्थामें बराबर चला रहे हैं व जहां तक कुछ निर्णय न होगा व नवीन प्रकाशक नियत नहीं होगा 'मित्रका' कार्य हमें चालु ही रखना पड़ेगा।

हमें नित्य कई पत्र आरहे हैं कि जैनमित्रके सम्पादक ब्र० शीतलप्रसादजी ही कायम रहने चाहिये (व दूसरे सम्पादक नियत होंगे तो हम ग्राहक नहीं रहना चाहते) तथा गुजरातके अनेक स्थानोंके भाईयोंकी मीटिंग सुरतमें हो गई जिसमें भी ऐसा ही प्रस्ताव हुआ है इसलिये गुजरातके व अन्य स्थानोंके जैनमित्रके ग्राहकों-को हम विश्वास दिलाते हैं कि हम आपको किसी भी अवस्थामें ब्रह्मचारीजीकी लेखनीसे वंचित नहीं रखेंगे। अर्थात ब्रह्मचारीजीके संपादकत्वमें व हमारे प्रकाशकत्वमें साप्ताहिक पत्र अवश्य २ चालु ही रहेगा। तौभी प्रत्येक ग्राम व शहरकी विशेष सम्मति मिलनेकी हमें आवश्यकता है इस लिये 'जैनमित्र' के संपादक कौन होने चाहिये इसपर अपनी२ सम्मति हरएक ग्राम व शहरके भाई हमें भेजें।

महावीरजी क्षेत्र—के इसबारके मेले पर बेरिस्टर चम्पतरायजीके सभापतित्वमें इस क्षेत्रकी प्रबन्ध कमेटी २१ सभासदोंकी हुई है जिसमें ८ सभासद जयपुरके हैं। व सभापति भट्टारकजी व मंत्री ला० महावीरप्रसादजी नियुक्त हुए हैं।

जनमित्र और ब्रह्मचारीजी।

पाठकों "जैनमित्र अंक २९ वर्ष २४"से यह जानकर अत्यंत दुःख हुआ कि समाजके परम हितैषी पूज्य ब्र० शीतलप्रसादजीसे सम्पादकीका कार्य लेकर पं० बंशीधरजी शास्त्रीको सौंपा जानेवाला है। ब्रह्मचारीजीने जो सेवा समाजकी करी है वह बंधुओंपर प्रगट ही है। यह ब्रह्मचारीजीके ही प्रयत्नका फल है कि जैनमित्र जैन समाजमें ही नहीं किन्तु जैनेतर समाजोंमें भी सर्वप्रिय हो रहा है। वर्तमान समयमें कोई भी ऐसा जैन पत्र नहीं है जो जैनमित्रकी तुलना कर सके। जैनमित्रमें सम्पादकीय लेख नूतन जैन अजैन देशी विदेशी समाचार व समयोचित भावपूर्ण कवितायें निकलती रहती हैं। क्या कोई अन्य जैन पत्र भी ऐसा है जो इतने नूतन समाचारों लेखों और कविताओंसे विभूषित होकर नियमितरूपसे समयपर निकलता रहता हो? उत्तर स्पष्ट है "नहीं"। जैनमित्रके २९ वे अंकसे ही यह भी ज्ञात होता है कि ब्रह्मचारीजीने कोई त्यागपत्र (स्तीफा) नहीं दिया है ऐसी स्थितिमें बिना कोई विशेष कारण हुये मित्रको एक परोपकारी संपादकसे निकालकर अन्य संपादकके आधीन करना सर्वथा अनुचित और हानिकारक है। हां उस हालतमें जब कि संपादक महोदयके निकट समयाभाव हो—सभाके नियमोंके विरुद्ध लेखादि पत्रमें निकलते हों या और कोई अन्य विशेष कारण हो उस दशामें एक संपादकको हटाकर अन्य संपादकको नियुक्त करना न्यायानुमोदित है। परन्तु जब कि ब्रह्मचा-

रीजी योग्य रीतिसे समय निकालकर मन, वचन, कायसे जैनमित्रके संपादन कार्यको उत्तम रीतिसे चला रहे हैं ऐसी दशामें ब्रह्मचारीजीको कार्यसे हटाकर अन्यको देना अदूरदर्शिता प्रगट करता है। जहांतक ज्ञात हुआ है उससे यही प्रतीत होता है कि ब्रह्मचारीजीको प्रथक् करनेका कारण मतभेद है और मतभेदसे ही फूट उत्पन्न होती है सो फूट तो सब समय सब देशोंमें अल्पाधिक परिमाणमें होती ही है। आसामसे लगाकर कुस्तुन्तुनियां तक इस समय फूटका साम्राज्य है। जिस राष्ट्रीय महासभामें कुछ समय पूर्व सर्वत्र ऐक्यता विराजमान थी उसमें तथा सरकारके परम सहायक सहयोगियों और सरकारमें भी फूट फैल चली है। जो हिंदु मुसलमान कुछ समय पूर्व कंधेसे कंधा लगाकर सरकारसे लोहा ले रहे थे उनमें भी आज भयंकर फूट फैल गई है। और तो जाने दीजिये अपने घरमें ही (दिगम्बर श्वेताम्बरोंमें) फूट महारानीका साम्राज्य है ऐसी परिस्थितिमें मत भेद होनेसे ही एक योग्य संपादकको हटाकर दूसरे संपादकको नियुक्त करना उचित नहीं कहा जा सक्ता। इसलिये मेरा बंबई प्रांतिक सभासे सनम्रनिवेदन है कि वह उस प्रस्ताव पर पुनः विचार करें। मेरे इस लेखसे कोई भाई यह न समझले कि पं० बंशीधरजी इस कार्यके अयोग्य ही हैं परन्तु लिखनेका मुख्य तात्पर्य यही है किविना कोई विशेष कारण हुये ब्रह्मचारीजीको जैनमित्रके संपादन कार्यसे हटाना समाजका अहित करना है।

देवेंद्रकुमार गोधा विशारद इन्दौर।

जैन समाचारावलि।

सूरतमें लग्न समारंभ, जलसा व बृहत् दान।

सूरतमें सेठ किसनदास पूनमचन्द कापड़ियाके पुत्र **मूलचंदजी**का लग्न समारम्भ ज्येष्ठ वदी ४ को धार्मिक व सामाजिक उत्सव तथा विद्यादानपूर्वक सानंद समाप्त हो गया।

प्रथम ज्येष्ठ वदी १ को सुबह एक जलसा भट्टारक श्री सुरेन्द्रकीर्तिजीकी अध्यक्षतामें हुआ था जिसमें यहांकी दि० जैन पाठशालाके विद्यार्थी व फुलकोर कन्याशाला, श्राविकाशाला व कस्तूरबा राष्ट्रीय कन्याशालाकी बालिकाएं आमंत्रित की गई थीं जिन्होंने गायन, गरबा, संवाद आदि करके सभाके मन रंजन किये थे। पाठशालाके छात्रोंका पैसा, फेशन व खादीपर संवाद आकर्षक हुआ था। इस जलसेमें पूज्य ब्र० शीतलप्रसादजी, ब्र० दिग्विजयसिंहजी, पं० दीपचंदजी वर्णी, ब्र० महावीरप्रसादजी, ब्र० हेमसागरजी आदि त्यागीगण तथा सूरतके असहकारी नेता जैसे कि डॉ० दीक्षित, मोतीलाल छोटालाल व्यास, मालतीबहिन आदि उपस्थित थे व ब्र० शीतलप्रसादजी, पं० दीपचंदजी डॉ० दीक्षित, मोतीलाल व्यास, श्री० मगनबहिन, सैरंध्राजी आदिके व्याख्यान हुए थे जिसमें उन्होंने विवाह प्रसंगपर ऐसे ही जलसे होनेकी आवश्यकता बताई थी। फिर सभी करीब २०० बालक व बालिकाओंको खादीके रुमाल,

खादी, मिठाई व यशोधरचरित्र तथा चेतनकर्मचरित्र पुस्तकें भेटमें दी गई थीं तथा कन्याके पिता शा० गुलाबचन्द लालचन्द पटवाकी ओरसे 'सविताब्हेन लग्न गीतावली' नामक सचित्र पुस्तक सभी ३०० बालिका व स्त्रियोंको भेटमें बांटी गईं थीं व इस मौकेकी खुशालीमें इस समय इस प्रकार बृहत विद्यादान हुआ था—

१७७) मूलचंद किसनदास कापड़िया
१००) किसनदास पूनेमचन्द ,,
९१) एक पूज्य सद्‌ग्रहस्थ
६१) गुलाबचन्द लालचन्द पटवा
५०) श्रीमती मगनबहिन
१००) काशीबहिन चुनीलाल हेमचन्द जरीवाला
१००) परसनबाई नवलचन्द हीराचन्द झोंहरी
२१) श्री० चडावबाई चुनीलाल झवेरचन्द
३०) ,, चम्पाबाई प्रेमचंद मोतीचंद जौहरी
२१) हरगोविंददास मंछाराम
२५) नवलबहिन चुनीलाल हेमचन्द
२५) छगनलाल उत्तमचन्द सरैया
७१) कस्तुबाई लक्ष्मीचन्द चौकसी

९८८) कुल

इन रुपयोंमेंसे २९७) दि० जैन पाठशाला २१०) फुलकोर कन्याशाला, ६१) दि० जैन श्राविका पाठशाला, २७१) राष्ट्रीय केलवणी मंडल सुरत व ४०) राष्ट्रीय कस्तुरबा कन्याशाला को दिये गए हैं।

यह जलसा तीन घंटेके बाद १२बजे हार तुर्रा पान गुलाब लेकर विसर्जित हुआ था। स्त्रीपुरुषकी जनसंख्या ३००-४०० से कम न थी व जलसा चंदावाडीमें लग्नमंडपमें ही किया गया था।

यह विवाह समारम्भ ज्येष्ठ वदी ४ रात्रिको ८ बजे हुआ था तब सब विवाह विधि पं० छोटेलाल परवार (सुप्रि० प्रे० बो० दि० जैन बोर्डिंग अहमदाबाद) व पं० दामोदरदासजी बुढ़वार (ललितपुर) ने कराई थी तथा इस मौकेपर पूज्य ब्र० शीतलप्रसादजी व पं० दीपचन्दजी वर्णीने 'गृहस्थधर्म' पर प्रासंगिक व्याख्यान दिये थे व उसी वख्त मूलचन्दजीकी ओरसे अपनी जैन संस्थाओंको भी इस प्रकार दान करना प्रकट किया गया था।

२१) श्राविकाश्रम बम्बई
१९) स्या० महाविद्यालय काशी
१९) गोपाल विद्यालय मुरैना
१५) महाविद्यालय ब्यावर
१९) ऋ० ब्र० आश्रम जयपुर
१५) जैन पाठशाला सागर
१०) अनाथालय बडनगर
१०) औषधालय ,,
१९) अनाथालय देहली
१९) ब्र० आश्रम कुंथलगिरी
१९) पार्श्वनाथ विद्यालय उदेपुर
१९) जैन बालाविश्राम आरा
१९) ,, महिलाश्रम देहली
१९) ,, पाठशाला पपौरा
१९) जैनमित्र कार्यालय

२२५) कुल

सेठ ताराचन्दजीकी पुत्री बहुत बिमार थी इसलिये विवाहका सब कार्य रात्रिको १२ बजेतक निपटा दिया गया था।

शोकजनक मृत्यु-सुरतमें प्र. ज्येष्ठ वदी ५ की सुबहको चंदावाडीमें सेठ ताराचन्द नवलचन्द जौंहरीकी १२ वर्षकी होनहार पुत्री निर्मलाका भयंकर ज्वरसे देहांत हो गया। इस पुत्रीके स्मरणार्थ सेठ ताराचन्दजीने २०००) निकाले हैं।

करजन (बडौदा) में महासभाके उपदेशक सोमपालजीके ४ दिन तक पधारनेसे कई व्रत नियम लिये गये व मंदिर बनानेके लिये करीब १२००) का चंदा हो गया है।

सोलापुर-में गत ता० २-६-२३ को १२ अगुओंकी सहीसे मीटिंग हुई थी जिसमें करीब १५० की संख्या उपस्थित थी। सभापति रावजी नेमचंद शाह वकील हुए थे व इस प्रकार प्रस्ताव पास हुआ है कि ब्र० शीतलप्रसादजी 'जैनमित्र' का सम्पादन अत्यन्त यशस्वी व योग्य रीतिसे कर रहे हैं इस लिये ब्रह्मचारीजी ही जैनमित्रके सम्पादक कायम रहने चाहिये।

नागौर-की कन्या पाठशालाको सेठ मोहनलालजी मच्छीने २॥ वर्ष तक ५०) मासिक सहायता देना स्वीकार किया है।

आवश्यकता-तिलोकचंद जैन हाईस्कूलमें जैन अजैन छात्रोंकी आवश्यकता है। यहां जैन धर्मकी शिक्षा, स्कूलफीस माफ, छात्राश्रममें निवास स्थान, पेडरूपसे भोजनका प्रबन्ध आदि सुभीते हैं। जो विद्यार्थी यहां आना चाहें ता० २० जून तक अपनी अर्जी भेजें।

जयपुर-में ता० २ को वीर सेवक मंडलकी ओरसे सभा होकर प्रस्ताव हुआ कि बंबई प्रां० दि० जैन सभाके नांदगांवके अधिवेशनमें जैनधर्मभूषण ब्र० शीतलप्रसादजीको जैनमित्रके सम्पादकत्वसे अलग किया गया है उसका यह सभा घोर विरोध करती है। जैनमित्र बम्बई प्रां० दि० जैन सभाका मुखपत्र होते हुए भी सार्वदेशिक जैन पत्र है इस लिये प्रांतिक सभाको सारे जैन समाजके भाइयोंका ख्याल करना चाहिये।

सुजानगढका बृहत् विद्यादान-सुजानगढकी प्रतिष्ठाके समय माघ मासमें ९२१२=)॥ का बृहत् विद्यादान हुआ था जो इस प्रकार संस्थाओंको भेजा गया है-

१०००) बडनगर औषधालय, ५००) बडनगर अनाथालय, ११००) कुंथलगिरि आश्रम, ६००) मोरेना विद्यालय, ४००) देहली अनाथाश्रम, ७५०) स्या० विद्यालय काशी, ५००) ब्यावर महाविद्यालय, ११००) केकडीकी संस्थाएं, ७५०) ब्र० आश्रम जयपुर, १५०) उदेपुर विद्यालय, २००) जैन बालविश्राम आरा, ४००) सुजानगढ़ गौशाला, २५०) कबूतरोंकी मोठ, १२००) बीकानेरमें नवीन मंदिर बनवानेको, २००) जयपुर पाठशाला व १२=)॥ पोस्टेज खर्च।

विवाहमें दान व जीर्णोद्धारका चंदा-सेठ नानूलालजी नागपुरके पुत्रकी शादी बेतुलमें फा० सु० ३ को हुई थी तब १५१) उपकरणादिमें व २७१) संस्थाओंको दान किया गया तथा वहांके ५०० वर्षके पुराने मंदिरके जीर्णोद्धारके लिये ४११७)का चंदा भी होगया। तथा काम चालु करनेकी व्यवस्था भी की गई।

सुरतमां रथोत्सव.

सुरतमां चन्दावाडीनी पासे आवेल जुना दहेरानो जीर्णोद्धार पंच तथा शेठ ताराचंद नवलचंद झवेरी तरफथी आशरे रुप्या ३००००) खर्चाई थयो हतो ते निमित्ते पूजन, शांतिविधान अने रथोत्सव समारम्भ वैशाख सुद १० थी १९ सुधी ठाठवाठथी थयो हतो, जे प्रसंगे गुजरातना नाना मोटा गामोना आशरे ३०० स्त्री पुरुषो तथा ब्र० सुरेन्द्रकीर्तिजी, ब्र० शीतलप्रसादजी, ब्र० दिग्विजयसिंहजी, ब्र० दीपचन्दजी वर्णी, ब्र० हेमसागरजी, ब्र० महावीरप्रसादजी वगेरे त्यागीओ पधार्या हता तथा सेठ सुखानंदजी, सेठ चुनीलाल हेमचन्दजी, सेठ लल्लुभाई लखमीचंद चोकसी, सेठ ठाकोरदास भगवानदास वगेरे आगेवानोए खास हाजरी आपी हती.

पूजन रोज थतुं हतुं तेम शास्त्रसभा पण थती हती तथा रोज रात्रे चंदावाडीनी सामेना विशाल चोगानमां विद्वानोनां व्याख्यान थतां हतां जेमां भ० सुरेन्द्रकीर्तिजी, ब्र० शीतलप्रसादजी, ब्र० दिग्विजयसिंहजी, पं० दीपचंदजी वर्णी वगेरेना आत्मधर्म, अहिंसा, गृहस्थधर्म, १६ संस्कार वगेरे विषयोपर व्याख्यान थयां हतां जेमां स्त्री पुरुषो रात्रे १० वागता सुधी सारी संख्यामां हाजर रहेता हता.

रथोत्सवनो वरघोडो बहुज ठाठमाठथी सुद १४ ने दिने नीकल्यो हतो. रथ तथा सावेला वगेरेनी बोलीमां ९०००) नी उपज थई हती. मुंबाईथी कृत्रिम घोडानो सुंदर रथ आवेलो होवाथी आखुं सुरत शहेर आ रथोत्सव जोवा उतरी पडयुं हतुं. दि० जैन पाठशालाना विद्यार्थी तथा मीयागाम करजनना भाइयो भजन आखे रस्ते गाता हता. आ प्रसंगे पांच दिवस संघनुं जमण थयुं हतुं जेमां बे दिवस सेठ ताराचंद तरफथी तथा शा. छगनलाल तासवाला, वखतचन्द झवेरचंद तथा जुना दहेरानी पंचायती तरफथी जमणो थयां हतां जो के आ जमणोमां अत्रेना संघ नरसिंगपुरा भाइओए नजीवा मतभेदने लीधे भाग लीधो न होतो जे योग्य जणातुं नहोतुं.

वळी शेठ सुखानंदजी तथा शेठ ताराचन्दजीने अभिनंदन आपवा अत्रेना दि० जैनो तरफथी पुनेमने दिने फुलवाडीमां मेळावडो थयो हतो, जेमां मूळचन्द कसनदास कापडिया, ब्र. शीतल प्रसादजी तथा ब्र. दीपचंदजीए ए बंने दानी महाशयोनी उदारतानुं वर्णन करी तेमनो उपकार मान्यो हतो, जेना उत्तरमां शेठ सुखानंदजीए ३०१) तथा शेठ ताराचन्दजीए ३०१) अत्रेनी १ संस्थाओने भेट आप्या हता तेमज शेठ चुनीलाल हेमचंदे पण १९३) नुं दान कर्युं हतुं. वळी सुरतमां दर वर्षे रथोत्सव करवानी सूचना पण आ प्रसंगे थई हती.

नांदगांवना ठरावनो घोर विरोध।

सुद १५नी रात्रे भ० सुरेन्द्रकीर्तिजीना प्रमुखपणा नीचे मळेली खास सभामां शा० छगनलाल उत्तमचन्द सरैया सुरतनी दरखास्त अने शा० छोटालाल घेलाभाई गांधी अंकलेश्वर तथा जीवणलाल हलोचंद बोचासणना टेकाथी नीचेनो ठराव सर्वानुमते पसार थयो हतो.

सुरतमां रथोत्सव प्रसंगे भेगा थयेल सुरत, रांदेर, अंकलेश्वर, वडोदरा, अमदावाद, प्रांतिज,

ईडर, मुंबाई, दाहोद, सोजीत्रा, रतलाम, जैपुर, जितुर, बोचासण, करमसद, आगरा, पालेज, मीयागाम, भावनगर, पालीताणा, परतापगढ़ तथा गुजरातना घणा नाना मोटा गामोना दि० जैन भाइओ तथा भट्टारक १०८ श्री सुरेन्द्रकीर्ति, ब्र० शीतलप्रसादजी, ब्र० कुंवर दिग्विजयसिंह, ब्र० दीपचन्दजी वर्णी, ब्र० महावीरप्रसादजी अने ब्र० हेमसागरजीनी उपस्थितिमां आ सभा ठराव करे छे के मुंबई दिगम्बर जैन प्रांतिक सभा तरफथी सुरतथी ब्र० शीतलप्रसादजीना संपादकपणा नीचे 'जैनमित्र' मासे साप्ताहिक उत्तम रीते नियमितरूपे प्रकट थाय छे तेना संबंधमां नांदगांवनी सभानी बेठकमां ब्रह्मचारीजीने बदले 'जैनमित्र' ना संपादक पं० बंशीधर शास्त्री शोलापुरने नीमवानो जे ठराव थयलो छे ते ठराव सामे पोतानो अणगमो अने सख्त विरोध जाहेर करे छे अने मुंबाई दिगम्बर जैन प्रांतिक सभानी मेनेजींग कमीटीना सभासदोने विनंति करे छे के तेओ ए ठराव बदलवानो ताकीदे प्रबंध करे अने आ सभानो मत छे के पूज्य ब्र० शीतलप्रसादजी 'जैनमित्र' नुं कार्य अतीव उत्तम रीते खंत अने परिश्रमथी करी रहेला छे तेथी 'जैनमित्र' ना संपादक ब्र० शीतलप्रसादजीज कायम रहेवा जोइए.

पांगलका वियोग—सेतवाल समाजके अगुए नेमिनाथ पांगलका बार्सीमें देहांत होगया। लातूरकी विशालकीर्तिकी गादी पर कोई मूढ व बालक भट्टारक न बैठे इसके लिये आपने जी तोड़ परिश्रम किया था। अंत समय १५०) दानमें निकाला गया है। आपके पुत्र तात्या पांगल प्रसिद्ध ऐतीहासिक लेखक व वक्ता हैं जो पूनामें निवास करते हैं।

करोली—में कैलादेवी पर जो हिंसा होती है उसको बन्द करानेके लिये जीवदया प्रा० सभा अहारनके उपदेशक पं० सोनपाल व पं० जुगमंदरदासजी भेजे गये थे जिनके उपदेशसे बहुत हिंसा बन्द हुई है।

मेवारामजीका स्वर्गवास—खुर्जा निवासी रा० बा० सेठ मेवारामजीका वैसाख व० १०को स्वर्गवास होगया। आपकी अन्त्येष्टि क्रियामें २००० आदमी सामिल हुए थे। शहर व कचेरी सब बंद रहा था।

एक लाखका दान—झालरापाटन निवासी सेठ विनोदीराम बालचंदवाले रा० ब० सेठ माणेकचन्दजीकी माताजीका स्वर्गवास ता० ८ अप्रेलको हो गया। अंत समय माताजीके दानमें उनके सुपुत्रोंने एक लाख रुपये निकाले हैं।

अगरणीमें उत्सव व दान—इन्दौरमें पंचायती नियमानुसार आठवां (अगरणी) में जीमनवार आदि बिल्कुल बन्द है इसलिये अभी हीरालालजी पाटणीने अपनी पत्नीके आंठवांके उत्सवमें तीन लोक मंडल विधान व कलशोत्सव १० दिन तक किया। तब नित्य उपदेश भी होता था तथा पाटणीजीने इस मौकेपर भिन्न२ संस्थाओंको ९२२१) का बृहत् दान किया है जिसमें ४००१) पाटणी बोर्डिंग मारोठ व शेष ९१)से २) तक संस्थाओं मंदिरों पत्रों आदिको दिये हैं।

प्रवास करेंगे—प्रसिद्ध ज्योतिषी व वयोवृद्ध पं० जियालालजी जैन (फरुखनगर-पंजाब)

लिखते हैं कि २-३माह अंतिम पर्यटन करना चाहता हूं इसलिये जो भाई मुझे बुलाना चाहें मुझसे पत्रव्यवहार करें।

दोहद-में पंचायती ठहराव हुआ है कि जैन मित्रके सम्पादक ब्रह्मचारीजी शीतलप्रसादजी ही रहने चाहिये।

वियोग-सेठ नाथारंगजीके पुत्र गंगारामभाईका भी वै० सु० १४ को वियोग हो गया।

आवश्यकता-दानवीर सर सेठ हुकमचंदजीके विद्यालय व बोर्डिंगमें प्रवेशिकाके २०) विशारदके १५ व अंग्रेजी पढनेवाले ३० इस तरह ६५ विद्यार्थियोंकी आवश्यकता है। जिनको आना हो द्वि० जेठ वदी १ तक अर्जी भेजें।

हजारीलाल मंत्री, जंवरीबाग-इन्दौर।

केशलोंच-कन्नडमें श्री त्यागी ऐलक पन्नालालजी पधरे हैं व प्र० ज्येष्ठ सुदी ८से ११ तक रथयात्रा व सुद १०को केशलोंच होगा।

नागपुर-में सि० नन्हेंशाहजीने अभी ३००००का दान इसप्रकार किया है-१५०००) औषधालय ५०००) गरीब व रोगीको खाने पीने वस्त्र आदिके लिये व १००००) नागपुर व रामटेक मंदिरमें पूजनार्थ।

शाहपुरा-(मेवाड) में फागुन मासमें जैन मेला व रथयात्रा हुई थी तब शाहपुराधीशको मानपत्र दिया गया था जिसके उत्तरमें महाराजाने अपनी नशियाको अमुक जमीन भेंट की हैं व मेवाडखेराड प्रां० सभाका प्रथम अधिवेशन पं० धन्नालालजी केकडीके सभापतित्वमें हुआ था जिसमें मंत्री आदिकी नियुक्ति हुई थी।

सुरतमां ७८००)नुं विशेष दान-अने चंदाबाडीनी पासेना मंदिरमां नीचे मुजब विशेष दान थयुं छे.

१६००) शा० डाह्याभाई रीखवदासना स्मरणार्थे चांदीना दरवाजा

१५००) शा० छगनलाल डाह्याभाईना स्मरणार्थे चांदीना दरवाजा

७५०) शा० डायाभाई रीखवदास तरफथी लीलावती अने जडावबाईना स्मरणार्थे माताजीनो गोखलो (आरसनो) तथा तेना चांदीना बारणां

७५०) मणीबहेन मुलचंद गुलाबचंद वाडिआनी तरफथी क्षेत्रपालनो गोखलो तथा तेना चांदीना बारणां

५००) नवलबाई माणेकचंद लामचंद तरफथी फूलचंदना स्मरणार्थे पार्श्वनाथ मंडपमां आरसनी लादी

५००) श्रीमती परशनबाई नवलचंद हीराचंद झवेरी तरफथी दर्शनना मोटा बारणां जर्मनसीलवरना

१०००) शेठ नवलचंद हीराचंदना पुत्र रतनचंदनी स्व० पत्नी लीलावतीना स्मरणार्थे चंद्रप्रभु चैत्यालयमां आरसनी लादी

५००) शेठ ताराचंद नवलचंदनी स्वर्ग० पुत्री निर्मलाना स्मरणार्थे प्रवेश द्वारमां आरसनी लादी

१००) चुनीलाल हेमचंद जरीवालानी तरफथी दर्शननो नानो दरवाजो जर्मनसीलवरनो

३००) कस्तुरचंद व्हेचरदास तरफथी दर्शननो दरवाजो जर्मनसीलवरनो

कुले रु० ७८००)

भारतीय दर्शनोंमें जैन दर्शनका स्थान।

(अंग्रेजी जैनगजटके मई २१के अंकमें प्रकाशित एक अजैन भट्टाचार्य महोदयके लेखका अनुवाद।)

भूतकालके अंधकारमें पड़ी हुई अपरिमित रत्नराशिको प्रकाशमें लानेके लिए अपने भारसक प्रयत्नों द्वारा पुरातत्वखोजी बहुतसी ऐसी व्याख्यायों वा सामाजिक घटनाओंकी तिथि—ईसाके पूर्व अथवा पश्चात्—अङ्कित करने जैसे असाध्य रोगमें व्यस्त हो जाते हैं। दृष्टान्त स्वरूप विद्वान लोगोंने वेदवर्णित क्रियायोंके सम्बन्धमें न्यायान्वेषण करनेकी प्रथम क्रियाका समय निश्चित करनेके लिए आपसमें विवाद किया। कितनेकने तो उन वेदमंत्रोंको जिनमें न्यायकी गम्यता पाई जाती है क्रियाकाण्डके मंत्रोंके साथ साथ उनकी सैद्धांतिक परिभाषा करते हुए उन्हें पश्चात्का नवीन संस्करण स्थापित किया है, मानो सिद्धान्तका जन्म एक मुख्य निश्चित दिवस ही हुआ हो। समानरीत्या जैनधर्म और बौद्धधर्मकी प्राचीनताके संबन्धमें भी एक सागरम और उद्विग्न विवाद विद्वानोंके मध्य चालु रहा। किसीके मतानुसार जैनधर्म बौद्धधर्ममेंसे विकसित हुआ और बौद्धधर्म मूल जड़ है। और अन्योंने यह माना कि बौद्धधर्मसे पूर्व जैन धर्म विद्यमान रहा था। चाहे जितनी ही विभिन्नता इन विवादके यथार्थ भावमें हो, हम यह कहनेका साहस करते हैं कि इन विवादोंको अंशांशमें केवल मूल्यहीन ही नहीं यद्यपि मनोरंजक माना जासक्ता बल्कि एक देशके सैद्धान्तिक विकाशके नियमके मिथ्या भ्रमपर ऊपरको चढ़ाए गए हैं। कारण कि यदि तर्कवाद मानुषिक स्वभावका एक मुख्य चिन्ह है तो यह मानना भी कोई अयुक्त नहीं है कि किसी न किसी प्रकारका न्याय और सिद्धान्तका प्रचार एक समाजमें सदैव प्रचलित रहता है। उस समय भी जब कि समाज थोथे क्रियाकाण्डोंके मध्य उतरा रही हो। अवश्य ही क्रियाकाण्ड स्वयं अपने निर्माणमें सामाजिक बाल्यकालके पशु सदृश क्रिया परके न्यायवादका कुसंस्कृतरूप है। तर्कवादका भाव और स्थापित नैतिक नियमोंसे ऊपर जानेकी आकाङ्क्षा, एवं उच्चसे उच्च उद्देश्योंका विचार समाजकी प्रत्येक दशामें विद्यमान है, चाहे उसका प्रत्यक्षमें वक्तृत्व न पाया जाय।

इस प्रकार सिद्धान्त (Philosophy) का जन्म—समय निश्चित करना कठिन सदा है। अवश्य ही विविध दर्शनोंकी उपयुक्त रज उनके नामधारी संस्थापकोंके बहुत पहिले विद्यमान रही होगी। यह भ्रममय है जैसे यह मत। कि बौद्ध और जैनधर्म बुद्ध और वर्द्धमान (महावीर) से प्रारंभ हुए। नहीं! इन दोनों धर्मोंके मुख्य एवं आवश्यक तत्व इन दोनों महात्माओंके पहिलेसे ही संचित हो रहे थे। यह उन महात्माओंका ही शुभ कार्य्य था कि वे इन तत्वोंका व्याख्यान करें—जगतके समक्ष उन तत्वोंकी यथार्थ एवं विशालताका प्रमाण प्रकट करें और सर्वपरे उन तत्वोंका सर्वसाधारणमें

प्रचार करें। हमारे विचारसे इन महात्माओंने केवल यही कार्य किया और इससे अधिक नहीं। सैद्धान्तिक नियमों और तत्वोंके संबंधमें दोनों ही धर्म्म बुद्ध और वर्द्धमानके जन्मसे बहुत पहिलेसे प्रचलित कहे जासक्ते हैं। दोनों ही धर्म प्राचीन हैं। *अवश्य ही उतने ही प्राचीन* हैं जितने कि उपनिषद्!

यह मान्यता कि जैनधर्म और बौद्धधर्मके कोई इतिहासिक (Records) कथन उपनिषिदोंके समकालीन नहीं हैं। और इस कारणवश वे उतने प्राचीन नहीं कहे जासक्ते जितने कि उपनिषद् हमारे लिए बाधक नहीं है। उपनिषद् प्रत्यक्षमें वेदोंसे विलग नहीं हुएथे और तत्फलतः एक अधिक संख्यामें उसके अनुयायी रहे। अवैदिक (वेदविपरीत) धर्म पहिले पहिले भीरु रहे होंगे और अवश्य ही अपनेको व्यक्त करनेके लिए उपयुक्त अवसरकी बाटमें रहे होंगे। परंतुः दर्शन (विचार) नियम होनेकी अपेक्षा वे उपनिषदोंके समयमें भी विद्यमान रहे होंगे। यह मानना असंगत है कि जब विचारशील मनुष्योंने अपने धर्मका विचार करना प्रारंभ किया तब उन्होंने केवल एक पंक्ति ढूंढ़पाई जैसे उपनिषिधोंकी। नहीं! विचार स्वतंत्र था। और उसने आर्षके विपरीत नूतन पंक्तियां भी ढूंढ़ निकाली होंगी। और अवश्य ही उपनिषिधोंके सिद्धान्त शीघ्रगम्य नहीं कहे जा सक्ते बनिस्बत अन्योंके, जिससे कि माना जावे कि वे अवश्यम्भावी रीत्या पहिलेसे विचारकर लिए *गए होंगे।*

अब यदि हम यह मान कि प्राचीन एवं अर्वाचीन (Non-orthodox) मत साथ साथ संस्थापित हुए और विकसित हुए तो हम जरूर ही उनमें एक समान तत्वों व नियमोंकी संख्याको पा सकेंगे। इसलिए यह विशेषतया सदैव जतलाने योग्य है कि जब कभी किसी विशेष भारतीय *दर्शनका अध्ययन किया जा रहा* हो तो उसकी तुलना देशमें प्रचिलित अन्य मुख्य मतोंसे की जाय।

जैन धर्म यद्यपि बंगालमें बहुत कम अपनाया और अध्ययन किया गया तो भी उसका स्थान भारतके सैद्धांतिक मतोंमें वास्तविक रीत्या उच्च है। विशेषतया जैन सिद्धान्त एक पूर्ण दर्शन है। उसमें सैद्धांतिक ज्ञानकी सर्व शाखाओंका समावेश है। वेदान्त न्यायकी शिक्षा नहीं देता। वैशेषिक आचार सम्बन्धी नियमोंका वर्णन नहीं करते। **परन्तु जैनधर्ममें उसका स्वयंका न्याय है-सिद्धान्त है आचार है अध्यात्मवर्णन आदि है।** वास्तवमें यह एक देदीप्यमान प्राचीन दर्शन है। **भारतीय फिलासफीका अध्ययन अधूरा ही रह जायगा, यदि जैनधर्मकी अवज्ञा की गई।**

हमारे जैन धर्मके अध्ययन करनेका प्रबन्ध इस प्रकार प्रदर्शित हो गया। जैसे कि हम कहते हैं वह एक तुलनात्मक अध्ययन होगा। इसमें संशय नहीं कि यह एक अति कठिन कार्य है जो समस्त दर्शनोंके यथार्थ ज्ञानको सम्मिलित कर लेता है। परन्तु हम यहां केवल सनातनी *नियमोंपर ही विचार करेंगे।*

जैन धर्मकी अवस्थाका दिग्दर्शन कराते समय

हम निम्नाङ्कित तुलनात्मक निर्णय पर विचार करेंगे। जैमिनिके सिद्धान्तोंको छोड़कर अवशेषके सर्व भारतीय दर्शन वक्तव्य द्वारा अथवा अन्य प्रकार क्रियाकाण्डमय वेदोंकी श्रद्धाकी आलोचना करते हैं। वास्तवमें समस्त फिलासफी श्रद्धाके विपरीत तर्क वितर्ककी सनातनी लड़ाई है। इस दृष्टिकी अपेक्षा समस्त दर्शनोंको अब हमें एक एक कर हाथमें लेना चाहिए और उनके मुख्य सिद्धान्तोंपर विचार करना चाहिए। यह भी अवश्य ही ध्यानमें रखना चाहिए कि निम्नलिखित रीत्या भारतीय दर्शनोंका जो प्रकाश किया गया है वह न्यायके आधारसे है न कि ऐतिहासिक (Chronological) रूपमें।

कभी समाप्त न होनेवाले, बाह्यमें अर्थहीन वेदवर्णित क्रियाकाण्डका अति तीव्र विरोध अवश्य ही चार्वाकके सिद्धान्तोंमें भरपूर है। प्रत्येक समाजमें कितने प्रतिरोधक सुधारकों (Protestant Non-Conformists) का होना आवश्यक है और प्राचीन वैदिक समाज भी इस नियमसे वांचित न थी। वेदवर्णित सरल रीतियोंपर हानिकारक कारणोंद्वारा आक्षेप करना न कठिन था और जैसे न कभी है। विचारशील और सिद्धान्त अन्वेषी हृदय उनसे दीर्घकालतक संतोषित नहीं रहसक्ता। और आलोचना (Criticism)का प्रथम आक्रमण वेदर्द पाशविक यज्ञ संबंधी क्रियाकाण्डपर होगा। यही चार्वाक मत है जो कि वेदोंमें वर्णित कर्मकाण्डका कठोर निषेध है। यह खण्डन बादका मत है। यूनानके सूफी मतके सदृश इसने कभी भी पूर्ण रूपमें जगत सिद्धान्तके निर्णय करनेका प्रयत्न नहीं किया। इसके कार्य थे नष्ट करना, खण्डन—निषेध करना, आलोचना करना—अर्थात वस्तुको दबाना न कि उसकी प्रशंसा करना।

यदि वेदोंने माना था एक मनुष्योपर सत्ताको तो चार्वाक विचारकोंने उसपर संशयकी धूल डाली थी। जैसे कि ऐसी नास्तिक अवस्थाका उल्लेख छठे कथोपनिषद्की द्वितीय वल्लीमें है। यहां उल्लेख किया है उन विचारोंका जो एक भविष्य जीवनमें विश्वास नहीं रखते। वही उपनिषद आस्तिक सिद्धान्तपर अपनी षष्ठोवल्ली १२ में आक्रमण करता है।

पुनः कथोपनिषद्की प्रथमवल्ली (२०)में उन विचारकोंका उल्लेख है जो एक मनुष्योत्तर सत्तामें श्रद्धा नहीं रखते। इस प्रकार यदि वेदोंने यज्ञ संबंधी क्रियाकाण्डपर जोर दिया, तो इन प्रतिरोधकों (Non-conformists)ने उनकी उपयोगताका निराकरण किया और उनके उपहासको दर्शाया। उपनिषद भी जो कि अपने आर्ष (orthodox) माननेका और स्वतः वेदोंका एक भाग अपनेको प्रगट करनेका दावा भरते हैं, वैदिक क्रियाकाण्डकी आलोचना करते हैं। जैसे कि बहुतोंमेंसे एक दृष्टान्त इस प्रकार है:—

"परन्तु ये प्रतिरूपक रीतियां जो कि नीच गुप्त समस्यायोंके करनेसे संबंधित हैं जैसे १८ द्वारा बताई गई, झांझरी नैयाके सदृश हैं (जो नाविकोंके लिए भयावह हैं)। मूढ़ जो इसे उच्चतम मानते हैं और उसपर हर्षित होते हैं, बारम्बार जन्म, जरा और मृत्यु भुगतते हैं।"

परन्तु उपनिषदोंने वेदोंकी आलोचना इस

उद्देश्यसे की कि जगतके समक्ष कुछ उच्च और उत्कृष्ट भाव प्रकट करें और उन्हें ठहराएँ जब कि नास्तिक चार्वाकने आलोचनाके सरल और सुगम मार्गके अगाड़ी पग न बढ़ाए। यह मुख्यतः एक खण्डनात्मक व्याख्या थी जिसका कि स्पष्ट प्रतिरूप न था। इसका कार्य था वैदिक रीतियोंका उपहास करना। इसमें संशय नहीं कि यही न्याय यथार्थता (Rationalism) का जन्म था जिसकी कि बढ़वारी हम अन्य भारतीय दर्शनोंमें ढूंढ़ेंगे।

चार्वाक नास्तिकवादके साथ२ जैनधर्म भी वैदिक यज्ञवादके कर्मकाण्डका निषेध करता है। उसने प्रत्यक्षमें ही वेदोंको अपना प्रमाण (authority) नहीं माना था। और नास्तिकत्वके वक्तव्यमें यज्ञ सम्बन्धी क्रियाकांडका प्रतिरोध किया।

यहां तक जैन धर्ममें चार्वाकसे समानता है। परन्तु इसके उपरान्त वह नास्तिकवादकी तरह एक निषेधक मत नहीं था। उसका उद्देश्य सिद्धान्त-निर्माण (System-building) पर था। सर्वोपरि वह चार्वाककी घृणित विषयसम्बन्धी हेडोनिज्मको पृथक् करता है। चार्वाक सिद्धांत अनुपयोगी क्रियाकाण्डकी सार्थकता पर प्रश्न उठाता हुआ उसके भीतर पैठनेका प्रयत्न नहीं करता परन्तु मानुषिक स्वभावके विषय संबंधी बातपर विशेष जोर देता है। उसने वैदिक रीतिरिवाजोंकी आलोचना की-यह कहा जा सक्ता है-साधारणतया इस कारण कि उन्होंने विषयवासनाओंका निरोध किया और दिखावेके रोकोंसे उनके लगामके विहीन भोगोंको रोका। परन्तु यदि क्रियाकाण्डकी आलोचना करनी है तो वह इस भावसे प्रारम्भ न होना चाहिए। रीति-रिवाज यथार्थ स्वभाव (Rational nature) के बढ़ाव और विकासका दम घोंटता है। यह ही आलोचनाकी यथार्थ दृष्टि है। नितान्त विषयवाद इसकी उपेक्षा करता है। और जैनधर्म बौद्ध धर्मके सदृश यथार्थ (Vationalistic) मत होनेके कारण चार्वाकसे अपना पीछा छुड़ा लेता है।

भारतीय फिलासफीका दूसरा मत जो यहां पर जैनधर्मसे तुलना करनेके लिए लिया जासक्ता है वह बौद्धमत है। नास्तिक वादकी सदृश बौद्धधर्म वैदिक क्रियाकाण्डका निषेध करते हैं। परन्तु इसकी यज्ञसम्बन्धी क्रियाकाण्डकी आलोचना एक अधिक यथार्थ भित्ति पर अवलम्बित है। बौद्धधर्मके अनुसार हमारा दुखदायी अस्तित्व कर्मके कारण है। जो कुछ हम हैं व जो कुछ हम करते हैं वा हमने किया है उसका फल है। हम जन्ममरण भुगतते हैं और पुनः जन्म धारण करते हैं क्योंकि हम इन्द्रियसुख और वासनाके पीछे भटकते हैं जो कि द्रव्यहीन छाया है और असावधान मनुष्योंको भटकाती हैं। यदि हम इस संसारमें अपने दुःख और पीड़ाओंका अंत करना चाहते हैं तो हमें अपने कर्मोंकी सांकलोंको तोड़ना चाहिए। अब हम कर्मराज्यके बाह्य भी पग बढ़ायंगे, यदि हम शुभ कर्मको दुष्कर्मसे, विरक्त भावको आसक्त भावसे, अहिंसाको हिंसासे मिड़ाएंगे। वैदिक यज्ञविषयक क्रियाकाण्ड छोड़ देना आवश्यक है क्योंकि वे केवल अनन्ते निरापराध पशुओंकी हिंसाकी ही शिक्षा नहीं देते सुतरां वे समझे जाते हैं

भक्तोंको स्वर्गोंमें पहुंचानेवाले अथवा अन्य वांछित स्थानोंमें। और इस प्रकार वे प्रत्यक्ष अथवा परोक्षरूपमें हमारे दुःख पूर्ण जन्म व पुनः जीवनके कारण हैं। इस प्रकार बौद्धधर्मके अनुसार हमें अहिंसा और त्यागका आचरण करना चाहिए यदि हमें कर्मके राज्यमेंसे पार पहुंचना है। यही इसका मुख्य सिद्धान्त है। वेदोंका निराकरण इस कारण करना चाहिए कि उनमें हिंसाका विधान है एवं वे प्रत्यक्ष अथवा परोक्षरूपमें निर्वाणके बाधक कारण हैं। एक समान दृढ़तामें बौद्धधर्म चार्वाक मतके विषयवादपर आक्रमण करता है यद्यपि वह उसका साथ वेदोंपर चढ़ाई करनेमें देता है। यदि हम वैदिक कर्मकाण्डसे हट जांयगे तो हमें हेडोनिज्ममें तल्लीन न होजानेसे सावधान रहना चाहिए, तप और नियमोंका पालन करना चाहिए। हां! यही नियम बौद्ध मतानुसार कर्मोंके जालसे छुटनेका है।

बौद्धधर्मके समान ही जैनधर्म भी मानता है कि हमारे दुःखदायी जीवनका कारण कर्मका बन्ध है। बौद्धधर्मके सदृश ही वह एक हाथ वेदोंकी प्रमाणिकताका निषेध करता है दूसरे हाथ चार्वाकके विषयवादको। समान दृढ़ताके साथ वह अहिंसा और भक्तिको मानुषिक आचारके सरल नियम मानता है। अवश्य ही उसकी शिक्षा इनके पालन करनेमें विशेष कठिन और दृढ़ है। परन्तु तब जैनधर्म बौद्धधर्मकी पहिली कमताईको अपनेमें नहीं पाता है।

परीक्षा करने पर यह प्रकट हो जायगा कि बौद्धधर्मका सुन्दर आचार वर्णन एक कम्पित नींव पर अवस्थित है। हमें वेदोंकी प्रमाणिकताका निषेध करना है—अच्छी बात है। हमें अहिंसा और त्यागका पालन करना है—अच्छी बात है। हमें कर्मोंके बंधन तोड़ने हैं—अच्छी बात है। परन्तु सारे संसारके लिए यह तो बताइए हम हैं क्या? हमारा ध्येय क्या है? स्वाभाविक उद्देश्य क्या है? इन समस्त प्रश्नोंका उत्तर बौद्धधर्ममें अनूठा पर भयावह है—**हम नहीं हैं** तो क्या हम छायामें श्रम परिश्रम कर रहे हैं? और क्या गहराव ही अंतिम ध्येय है? क्यों हमें कठिन त्याग करना है और हमें क्यों जीवनके साधारण इन्द्रियसुखोंका निरोध करना चाहिए? केवल इस लिए कि शोकादि नष्टता और नित्य मौन निकटतर प्राप्त हो जाऐं। यह जीवन एक भ्रान्तवादका मत है और दूसरे शब्दोंमें उत्तम नहीं हैं। अवश्य ही ऐसी आत्माके अस्तित्वको न माननेवाला विनश्वरताका मत सर्वसाधारणके मस्तिष्कको संतोषित नहीं कर सक्ता। आश्चर्यजनक उन्नति बौद्धमतकी उसके सिद्धांतिक विनश्वरतावाद (Nihilism) पर निर्भर नहीं थी बल्कि इसकी नामधारी "मध्यमार्ग" की तपस्याकी कठिनाईका कम होना ही है। साधारण मनुष्य भी यह अनुभव करता है कि मैं हूं। वह एक सत्तात्मक वस्तु है न कि द्रव्यहीन छाया। यह ही है जो प्रत्येक मनुष्यके अनुभवमें आता है।

जैसे कि उपनिषद्की प्रत्येक पंक्तिसे अनुमानतः चित्रित होता है यह वेदान्त ही है जो आत्माको अविनाशी और अकृत्रिम सत्ता मानता है। आत्मा है; उसका अस्तित्व सत्तात्मक

है अकृत्रिम और नित्य। यह देखनेमें आता है कि वह जन्मजन्मांतरोंको धारण करता रहता है, दुःख सुखका अनुभव करता है। परन्तु इसकी स्वाभाविक निधि अनन्त एवं अनाधिनिधन वीर्य, ज्ञान और आनन्द हैं।

यह वेदान्तका प्रथम सिद्धान्त है **और जैनधर्म भी आत्माको अनादिनिधन और अनन्त माननेमें सहमत है।**

इस प्रकार यह प्रत्यक्ष है कि वेदान्त और जैनधर्म दोनों ही साथ साथ बौद्धधर्मकी विनश्वरतावादका निषेध करते हैं। और आत्माकी सनातनी सत्ता मानते हैं। परन्तु यहांपर आकर दोनों धर्म विलग विलग होजाते हैं। वेदान्तवादी आत्माकी सत्ता मानकर संतोषित नहीं होता परन्तु वह साहसपूर्वक अगाड़ी बढ़ता है और आत्माको संसारी आत्मासे अनन्य ठहराता है। वेदान्तके मतानुसार श्रष्टि अपने समस्त चेतन अचेतन पदार्थोंके साथ केवल एक और आत्मासदृश (Selfsame) सत्ताकी प्रकाशन है। "मैं ही वह हूं।" सांसारिक (Cosmic) शक्ति वह है। मैं एक निराली और स्वतंत्र सत्ता नहीं हूं। मेरेसे बाह्य सांसारिक शक्ति जो मेरा प्रतिरोध करता विदित होता है एक स्वतंत्र और विलग सत्ता नहीं है। केवल एक मुख्य सत्ता है। और आप, मैं एवं अन्य समस्त चेतन पदार्थ तथैव पौद्गलिक पदार्थ और शक्तियां इन सत्ताओंमेंसे सत्ताका प्रकाशन समझना चाहिए।

वास्तवमें जैसे यह अति उच्च और विशाल भासता है वेदान्तका अभिन्नता (Identity)का सिद्धान्त साधारण मनुष्यों द्वारा कठिनतासे जाना जाता है। वे मानते हैं कि मनुष्यकी आत्मा एक सत्ता है परन्तु यह अवश्य ही एक बड़ा कार्य है कि उनसे मनुष्य मनुष्यके आपसी, और हृदय, पुद्गल एवं अन्य शक्तियोंके भी आपसी अंतरको भूल जानेको कहना यह वास्तवमें असंगत नहीं है एक विचारशीलके माननेमें—अपनेको एक सत्ता मानते हुए—कि वह अपने पड़ोसी—एक सत्ताके रूपमें—से विभिन्न है एवं सत्ताके रूपमें अचेतन पदार्थों और शक्तियोंसे भी। हम कहते हैं—ऐसी दृष्टि असंगत नहीं है; हम यह भी कह सके हैं कि वह साधारण समुदायके अधिकांश भागके साधारण मस्तिष्कको विशेषरूपमें संतोषित करती है। इसलिए वह साधारण है और वेदान्तका पीछा छुटता है।

दूसरा भारतीय दर्शन जिसका हम इस संबंधमें विचार करना चाहते हैं वह कपिलका विख्यात दर्शन है। वेदान्तसे आत्माको अकृत्रिम और अनादि माननेमें सहमत होते हुए भी वह आत्माकी बहु संख्या माननेसे बाज़ नहीं आता है। वेदान्तसे विपरीत वह एक अचेतन सांसारिक शक्तिको मानता है जो कि प्रत्यक्ष सहयोगमें पुरुष अथवा आत्माके साथ क्रियामय है। सांख्य सिद्धान्तके मतानुसार आत्मा अकृत्रिम, अनादि, अनन्त है और ऐसी आत्मा बहुसंख्यक हैं। कपिलका दूसरा मुख्य सिद्धान्त आत्मासे भिन्न और स्वतंत्र एक अचेतन शक्तिको माननेमें है। यद्यपि यह शक्ति समय विशेषके लिए आत्माके सहयोगमें क्रियावान है। हमारा छुटकारा आत्माको बाह्य शक्तियोंके पंजोंसे छुड़ानेमें है।

अब जैनधर्म भी जैसे हम देख आए हैं आत्माकी अनादिता और अनन्तताको स्वीकार करता है। कपिल सिद्धान्तके अनुसार यह एक बाह्य शक्तिकी सत्ता और अस्तित्वको मानता है जो स्वतंत्र स्वभावधारी आत्माको बन्धनयुक्त किए हुए है। सांख्यके समान जैन सिद्धान्त आत्माकी बहु संख्याको भी स्वीकार करता है। और अंतिमतया दोनों ही जैन और सांख्यधर्म यह मानते हैं कि निर्वाण विशुद्ध आत्माको बाह्य शक्तिके प्रभावसे छुड़ानेमें है।

साथ ही साथ यह भी विचारना आवश्यक है कि प्रत्येक साधारण मनुष्यके हृदयमें संभवता एक स्वाभाविक इच्छाका वास है कि अपनेसे किसी उत्कृष्ट, उच्च और विशेष धन्य पदार्थको पाए। एक भक्त मनुष्य चाहता है कि एक व्यक्ति, एक परमात्मा, प्रभू वा ईश्वर हो जो अपनेको उसके सामने पूर्णताका एक दर्शनीय चिन्ह प्रकट करे। मनुष्यमें एक स्वाभाविक प्रवृत्ति है कि वह एक उत्तम नैतिक उद्देश्यको एक सर्वोच्चतम व्यक्तिको जिसमें वीर्य, ज्ञान और आनंद अपनी पूर्णतामें हो माने। यदि धर्म एक श्रद्धा–उत्पादक ईश्वरीय व्यक्तिमें विश्वास उत्पन्न कर सक्ता है हम कह सक्ते हैं कि धार्मिक ज्ञान व उत्साह मनुष्यमें स्वाभाविक है। हम अपनेको हर अवस्थामें सीमित, परिमित, और अल्प समझते हैं अर्थात् अपनी शक्ति, ज्ञान और नैतिक धन्यतामें और इस लिए हमें बाध्य होना पड़ता है। अपने हृदयोंके समक्ष किसी ईश्वर वा परमात्माको माननेमें जिसमें कि वे सर्वगुण जिनके लिए हम आकाङ्क्षा करते हैं पूर्णरूपमें और विशुद्ध विकासमें पाते हैं।

अब चाहे कुछ बुद्धिमान टीकाकार कहें परन्तु यह सुगमरीत्या कहा जासक्ता है कि सांख्यदर्शन एक ऐसी नैतिक आदर्श अथवा पूर्ण व्यक्तिकी सत्ताको नहीं मानते हैं। यह योगदर्शन ही है जो प्रयत्न करता है–किस सीमा और शक्तिसे इसका परिमाण हमें नहीं लगाना है–इस हृदयकी आकाङ्क्षाकी पूर्ति करनेकी योगदर्शन सांख्य सिद्धान्तानुसार आत्माओंकी सत्ता और बहु संख्या मानता है। परन्तु योगदर्शन सांख्यसे अगाड़ी बढ़ता है और एक सनातनी आदर्शका अस्तित्व प्रकट करता है अर्थात् ईश्वर आत्माओंका परमात्मा अथवा प्रभू। इसमें जैनधर्म भी योग सिद्धान्तसे सहमत है। **योगमतानुसार जैनधर्म एक परमात्मा अथवा प्रभूको–अर्हत्‌को स्वीकार करता है। वह सृष्टि कर्ता नहीं है बल्कि पूर्णताका सनातनी आदर्श एवं परमोच्च नैतिक एवं अध्यात्मिक उद्देश्य है हमें उसके अनन्त पूर्ण स्वभावका विचार करना है और उसे अपने अभ्यंतर नेत्रोंसे देखना है। इस की संगति उपदेश-कारक, उन्नतिकारक उच्चपद प्रदायक और बलदानकारक है।** यह सर्व जैनधर्म और पाताञ्जलिके सिद्धान्तमें एक समान हैं।

इसके उपरान्त जिस भारतीय दर्शनका उल्लेख इस संबंधमें करना चाहिए वह कनाड़का दर्शन है। न्यायसंगत विकास वैशेषिक दर्शनका निकट भी और समझा जा सक्ता है। सांख्य और योग-

दर्शनोंमें जो कुछ आत्मा अथवा पुरुषके विपरीत है वह प्रकृतिके अथाह गर्भमें भर देते हैं। उनके अनुसार जो कुछ क्रियावान और फलतः सत्तात्मक भासता है वह सब संभवता सांसारिक (cosmic) शक्तिमें गिनी जासक्ती है। इसप्रकार स्थान (आकाश) काल और पौद्गलिक अणुओं पर कपिल और पातांजलिने विशेष ध्यान नहीं दिया है—वे समस्त प्रकृतिके ही कार्य समझना चाहिए। परन्तु ऐसा समझना सरल नहीं है। साधारण मस्तिष्क इन्हें स्वास्तित्वधारक स्वतंत्र सत्ता (Reals) समझते हैं। कैन्ट (Kant) भी अपनी विख्यात व्याख्यासे ही सदैव संदिग्ध नहीं रह सक्ता कि आकाश और काल हमारे मस्तिष्कके ही प्रादुर्भाव हैं। वह भी किसी २ समय इस बातको माने हुए प्रतीत होता है कि इन पदार्थोंका मस्तिष्कसे प्रथक् अस्तित्व और सत्ता है। पुनः-डेमाक्रिटस (Demceritus) से लेकर आज पर्य्यन्तके विख्यात विज्ञानाचार्यो (Scientists) तक—सर्व इस बातकी आवश्यक्ताको समझते हैं कि पौद्गलिक अणुओंकी नित्यता एवं स्वयं सत्ता स्वीकार की जावे। परन्तु कपिल और पतञ्जलिके दार्शनिक मत आकाश, काल और पौद्गलिक अणुओंकी नित्यता और स्वयंसत्ता (Self-existence) को कभी भी स्वीकार नहीं करेंगे। यह मानना चाहे कितना ही कठिन साध्य क्यों न हो परन्तु आपको समझना होगा कि आकाश, काल और अणु—अपने अपने स्वभाव, लक्षण और कार्य्योंमें इतने विभिन्न होते हुए भी-एक और उसी आद्य प्रकृतिसे निकले हुए हैं।

यह वैशेषिक दर्शन है जो अणुओं, आकाश और कालकी नित्यता और स्वयंसत्ताका वर्णन करता है। यथार्थ चार्वाक मतके अनुसार सम्भवता इनकी अवज्ञा करना यथेष्ट है। बौद्धकी विश्रृंखलता (Nihilism) हमारे अनुभवोंके नितान्त विपरीततामें उन्हें असत्तात्मक ठहरायगी। वेदान्त भी जाहिरा कोई उपयुक्त वर्णन नहीं करता है। सांख्य और योग दर्शन जैसे हम देख चुके हैं इन्हें अद्भुत प्रकृतिमें ही संयुक्त मानेंगे। यह कनद़का ही दर्शन है जो इन्हें नित्यता, सत्ता और स्वतंत्रता प्रदान करता है। जैन धर्म भी वैशेषिकोंके सदृश अणुओं, आकाश और कालको स्वयं सत्तात्मक और नित्य मानता है।

इसप्रकार यथार्थ तर्क वितर्कके मनोरम फल हैं जो हमें विविध भारतीय दर्शनोंने प्राप्त होते हैं। तर्क वितर्कके व्यवहार मार्गके अर्थ हमें न्याय सिद्धन्त तक जाना होगा। यहां हम समस्त नैयायिक सिद्धान्तोंकी गूढ़ताओंसे विचार करते हैं, यह गौतमका ही दर्शन हैं जो विचार संबंधी नियमोंका विशाल विवेचन करता है। जैसे कि सर्व जगतके दार्शनिक सिद्धान्तोंका एक मूल्यवान भण्डार हो, जैन धर्म भी विशेष उपयोगी न्याय विषयका दावा भर सक्ता है। इस संबंधमें इसके बहुतसे सिद्धान्त न्याय दर्शनके सदृश हैं। संभवता न्याय सिद्धान्तोंके उपरान्त जैन न्यायका अध्ययन आवश्यकतासे अधिक प्रतित हो इसलिए हम यह दर्शा देनेकी सावधानी प्रकट करते हैं कि जैन धर्मके न्यायके अपने अनोखेपन अलग ही हैं और विख्यात स्याद्वाद वा सप्तभङ्गी नयवादकी अपेक्षा इसके पास एक ऐसा सिद्धान्त है

जिसका इसे उपयुक्त रीत्या गर्व हो सक्ता है और जिससे गौतमका सिद्धान्त नितान्त अछूता है। यह इस प्रकार है कि हम जैन धर्मका स्थान भारतीय सैद्धान्तिक दर्शनोंमें द्योत करना चाहते हैं। कतिपयोंने अवश्य ही इसे बौध धर्मसे अभिन्न सिद्ध करनेके प्रयत्न किए थे। जैसे लैस्सन साहब (Lassen) और वेबर साहब (Weber)ने, जैन धर्मकी स्वतंत्र उत्पत्तिको स्वीकार नहीं नहीं किया था। इतने पहिले कि सातवीं शताब्दिमें हुअंग टूसान्ग (Huang Tsang)ने ऐसे कारण पाए जिससे वह जैनधर्मको बौद्धधर्मकी शाखा समझा था। इसके विपरीत बुह्लर साहब (Buhler) और जैकोबी (Jacobi) साहब दोनों ही जैनधर्मके स्वतंत्र निकासको स्वीकार करते हैं और बल्कि यह मानते हैं कि वह बुद्धसे पहिले भी प्रचलित था। हमारी इच्छा नहीं है कि हम इन पुरातत्व संबंधी प्रश्नोंकी उलझनमें पड़ें। हमने यह माननेकी जुर्रत की है कि बौद्धधर्म और जैनधर्म दोनों ही अपने विख्यात व्यवस्थापकोंके पहिलेसे ही विद्यमान थे। उनका निकास वस्तुतः बुद्ध और वर्द्धमानपर आश्रित नहीं है। यद्यपि वे दोनों ही वेद और क्रियाकाण्ड निषेधक हैं जैसे कि उपनिषद् स्वतः हैं। यह प्रकट करता है कि ह्वान्ट्सांगने क्योंकर दोनों धर्मोंको अभिन्न माना। जब वह भारतवर्षमें आया तब बौद्धधर्म प्रचिलित धर्म था। उसके मुख्य तत्व जैसे कि हम देख चुके हैं **अहिंसा और त्याग** थे। इन्हीं तत्वोंद्वारा रक्षक और भेदक शास्त्रोंके रूपमें बौद्धमत सफलता पूर्वक वैदिक कर्मकाण्डके विपक्षमें लड़ा था। और चाहे कोई धर्म हो जो वेदोंकी विपरीतता करता हो उसे इन तत्वोंको रखना होगा और इनके रखे बिना उसका काम नहीं चलसक्ता है। क्योंकि मुख्य कारणके लिए कि वैदिक यज्ञ हिंसामय थे और इन इच्छासे किए जाते थे कि मानुषिक विषयसुखकी वृद्धि इस भव और आगामीमें हो। अब जैनधर्मने भी वेदोंकी प्रमाणिकताका निषेध किया था। और उसने भी अहिंसा और त्यागको स्वीकार किया था। फलतः जैनधर्म अपने बाह्यरूपमें बौद्धधर्मके सदृश ही भाषता था। दोनोंने ही वेदोंका खन्डन किया था और दोनोंने ही अहिंसा और त्यागके सिद्धान्तोंको अपनाया था। यह बाह्यरूप ही दोनों धर्मोंका एक परदेशीको उनकी अभिन्नतामें विश्वास उत्पन्न करा सक्ता है। परन्तु इससे यह प्रमाणित नहीं होता कि वे सैद्धांतिक रीत्या अभिन्न हैं। **आचार संबंधी नियम भले हो दोनों दार्शनिक मतोंमें एक समान अथवा सदृश हों परन्तु उनके सिद्धान्त नितान्त ही एक दूसरेके विपरीत हैं।** मनुष्यकी मुक्ति हो सक्ती है कि मनुष्य जीवनके साधारण विषयसुखोंका निरोध करे और एक तपश्चरणमय एवं त्यागमय जीवन व्यतीत करे—ठीक! दृष्टान्तस्वरूप, यह तो प्रत्येक भारतीय दर्शनोंने एक करके माना है। यद्यपि उनके सिद्धान्त एक दूसरेके नितान्त विपरीत हैं। यूनान में सैनीसिज्म (Cynicism) और सैरेनैसिज्म (Cyrenaicism) दोनोंहीने अपने निकासकी एक मुख्य अवस्था पर जगतका संपूर्ण

रीत्या त्याग करनेका उद्देश दिया था यद्यपि दोनों धर्मोंके सिद्धान्त एक दूसरेसे इतने विपरीत थे जितने कि उत्तरी और दक्षिणी ध्रुव ! इस लिए यह योग्य नहीं है कि जैनधर्म और बौद्धधर्मकी अभिन्नता इस अपेक्षा मानना कि दोनों आचार सम्बन्धी नियम एक समान निर्धारित करते और बतलाते हैं। दिखाऊ एकता बौद्धधर्म और जैनधर्मकी इस पर अवलम्बित नहीं है कि एकका निकास दूसरेसे हुआ परन्तु खण्डन और यथार्थताके उस भावसे है जिससे कि उन्होंने साहसपूर्वक **वैदिक धर्मके प्रत्यक्ष हिंसामय और असभ्य क्रियायोंका निषेध किया था।**

वस्तुतः दोनों धर्मोंके सिद्धान्तोंपर विचार करनेसे यह विदित होता है कि एक दूसरेके नितान्त विपक्षमें है। मान लीजिए यदि बौद्धधर्म सर्व सत्ताओंका निषेध करता है तो जैनधर्म सत्ताओंको मानता है और एक अनन्त संख्यामें। बौद्ध कहता है:—आत्मा नहीं है; अणु नहीं हैं; आकाश, काल, धर्म (Motion) नहीं हैं; और परमात्मा भी नहीं है। इसके विपरीत जैनधर्म इन बातोंको स्वीकार करता हुआ इनकी पुष्टि करता है। बौद्धधर्मके अनुसार जब हमें निर्वाण प्राप्त होता है तब अस्तित्व हीनतामें हम विलीन हो जाते हैं। जब कि जैनधर्मके अनुसार हमारा वास्तविक अस्तित्व तभीसे प्रारंभ होता है। कर्मसिद्धान्त भी दोनों धर्मोंमें एक समान नहीं हैं।

इन कारणोंवश हम इसे उपयुक्त नहीं समझते कि जैनधर्मको बौद्धधर्मकी शाखा समझा जावे। एक घनिष्ट संबंध जैन और सांख्य दर्शनोंके मध्य अवस्थित देखा जाता है। दोनों ही दर्शन वेदान्तके अभिन्नताके सिद्धान्तका निषेध करते हैं और आत्माके बहु संख्यक सिद्धान्तका प्रतिपादन करते हैं। आत्माके अतिरिक्त दोनों ही अचेतन पदार्थकी सत्ताको भी स्वीकार करते हैं। तब भी यह संभव नहीं है कि एकको दूसरेका आधार माना जावे अथवा घटाया जावे। कारण कि परीक्षा करने पर दोनों धर्मोंकी सादृश्यता बाह्यमें ही प्रतीत होगी न कि यथार्थमें। सर्वसे प्रथम बात जो हमारा चित्त आकृष्ट करती है वह यह है कि जब सांख्य दर्शनमें अचेतन पदार्थका सिद्धान्त एक है तब जैनधर्ममें पांच हैं। तिसपर भी इन पांचमेंसे प्रथम पुद्गलके अनन्ते अणु हैं। इस प्रकार यदि सांख्य द्वैवाद है तो जैनधर्म वस्तुतः बहु संख्यावाद (Pluralistic) है। एक अन्य विशेष अंतर संभवता प्रकट होगा जब हम कहें कि जब कि कपिलका दर्शन भ्रान्तवाद (Idealism) के बहुत निकट है तब जैनधर्म पुद्गलवादके निकट पहुंचता है। *

पहिला प्रश्न जो सांख्य दर्शनके शिष्यके मस्तिष्कमें उत्पन्न होता है वह है, प्रकृति क्या है? क्या वह पौद्गलिक सिद्धान्त है वा भ्रान्तवादका? वास्तवमें वह स्थूलरीत्या पहिलेपहिल पौद्गलिक नहीं है। जिनको हम पौद्गलिक शरीर कहते हैं वे इसके विकास सिद्धान्तका अंतिम है। तब वह

---

* यह नोट कर लेना चाहिए कि वर्तमान लेखकका अभिप्राय यहां पर यह नहीं है कि सांख्य दर्शन वस्तुतः भ्रान्तवाद है और जैनसिद्धान्त पुद्गलवाद।

क्या है? वह तीन विरोधात्मक गुणोंका समुदाय अथवा समानता (Equilibrium) रूपमें वर्णित है। जहांतक अनुभव जाता है पुद्गल जैसे कि हम मानते हैं समुदायका ऐसा सिद्धांत नहीं हो सक्ता है। एक सिद्धान्त जो बहुसंख्यावादमें समुदाय है, जो विरोधी गुणोंकी बहु संख्यामें अपनेको बनाए रख सक्ता है, वह स्वभावमें अध्यात्मिक होना चाहिए। सहज ज्ञान तो यह कहता है और अनुभव एवं दार्शनिक विचार इसे पुष्ट करते हैं। यदि तब प्रकृति अपना नियमित विकासक्रम चालू रक्खे, यद्यपि वह तीन दिखाऊ विरोधी लक्षणोंसे चिन्हित है, तो वह एक आत्मिक स्वभाववाली माना जाना चाहिए। बाह्य विरोध तीन गुणोंका केवल उसी आत्मिक प्रकृतिका तीन विभिन्न मार्गों द्वारा व्यक्त करना है। कोई मुख्य विकास नहीं निकल सक्ता है यदि यह माना जाय एक संघर्षका मुर्दा खेत विविध मुख्य गुणोंके मध्य।

विकास परिणाम पर आनेसे विदित होता है कि प्रथम महत-तत्व वा बुद्धि (Intelligence) है—पौद्गलिक अणु, पत्थर वा अन्य कुछ स्थूल पदार्थ नहीं बल्कि कुछ आत्मीक रूपका दूसरा विकास परिणाम (Evolute) भी कुछ कुछ आत्मीक है अर्थात अहंकार वा स्वयंबोध (Self-consciousness) तब इंद्रियों पंच आवश्यक्ताएं और क्रमशः तत्व आते हैं। यह विकाशक्रम निरर्थक और स्वाधीन होगा यदि प्रकृति एक शुद्ध पौद्गलिक शक्ति मानी जावे। कारण कि महत—तत्व और अहंकार निश्चितरीत्या आत्मिक तत्व है। और यदि स्वयं कपिलके अनुसार—कारण कार्यके साथ उसी स्वभावका होना चाहिए तो विकासमय प्रकृति आत्मिक अपने विकास परिणामके सदृश होना चाहिए। हम प्रकृतिको पौद्गलिक मानते हुए यह प्रकट नहीं करसक्ते कि क्यों ये दोनों आत्मिक (Psychical) तत्व बीचमें आए एवं इसके पहिले कि स्थूल पौद्गलिक तत्व विकाशको प्राप्त हुए हों। यदि प्रकृति किसी प्रकार एक आत्मिक गुण (Potentiality) माना जावे तो उसे अपने आपको पूर्णतया जाननेके लिए पूर्णतया **निश्चय** करलेना चाहिए कि उसे क्या करना है (बुद्धिका कार्य), अपने आपको **जान लेना** चाहिए (अहंकारका कृत्य) और तब अपने आपमें क्रम क्रमसे विकाश करते चले जाना चाहिए अपने स्वभानु (Self-realisation) के स्थूल कारणोंको, अर्थात् इन्द्रियों, आवश्यक्ताओं, तत्वों (Elements)को इस प्रकार एक उत्तम और विशेष विशालवर्णन विकाशक्रमका प्राप्त हुआ यदि प्रकृति आत्मिक मानी जावे। और यदि फलतः विकाश परिणाम उसके स्वभानु (Self-realisation)के कारण समझें जावें।

यह भ्रान्तवादकी प्रकृतिकी मान्यता अवर्जनीय है और प्राचीनकालमें इससे अनिभिज्ञता नहीं रही होगी। इस प्रकार एक त्रुटिहीन प्रयत्न प्रकृतिको आत्मिक बनानेका किया गया है और उसीद्वारा, जैसे कि वह था, सांख्य सिद्धान्तको कथोपनिषेद तृतीयवल्ली, १०—११ के इस उल्लेखनीय लेखमें वेदान्त स्वरूप देना है।

"इंद्रियोंसे उच्च उद्देश्य (Objects) हैं; उद्देश्योंसे उच्च मन है; मनसे उच्च बुद्धि है; बुद्धिसे

उच्च उत्कृष्ट व्यक्ति है; उत्कृष्ट व्यक्तिसे उच्च अप्रकाश्य (Unmanifested) है, अप्रकाश्यसे उच्च आत्मा है। आत्मासे उच्च कुछ नहीं है। यह सीमा है—अंतिम ध्येय है।"

जैन सिद्धान्तका सम्बन्ध नितान्त विभिन्न है। यहां अचेतन पदार्थका सिद्धान्त एकसे अधिक ही नहीं है वरन ऐसे सर्व सिद्धान्त अनात्मिक हैं। यह सम्भव है जैसे हम देख आए हैं कि सांख्यके अचेतन पदार्थका सिद्धान्त आत्मिक बनाया जा सक्ता है परन्तु जैनसिद्धान्त कभी भी नहीं। यही सिद्धान्त पौद्गलिक अणु हैं (पुद्गल)। धर्म अधर्मके दो सिद्धान्त, काल और आकाश सर्व पुद्गल हैं अथवा पुद्गलकी पर्याय हैं। (Sincqua now) जैनधर्ममें आत्मा भी एक अस्तिकाय मानी गई है अर्थात किसी परिमाणको लिए हुए। उसमें लेश्या भी मानी गई है और वह अत्यन्त अल्पपरिमाण (Light) और उर्द्धगमन स्वभावको रखनेवाली मानी गई है। प्रत्यक्षतः यह सर्व सांख्य सिद्धान्तोंके विपरीत है और यदि कपिलका सिद्धान्त, जैसे हम देख चुके हैं, भ्रान्तवादके निकटतर है, तो जैनसिद्धांत किसी किसी समय पुद्गलवादके निकट पहुंचा ज्ञात होता है।*

यह इस प्रकार है कि हम देखते हैं कि जैन धर्म मुख्यतः सांख्यसे विपरीत है। और उससे नहीं लिया जा सक्ता है। नहीं, कतिपय बातोंमें दोनों दर्शन एक दूसरेका विरोध करते हैं। जैसे सांख्यमतानुसार आत्मा परिवर्तनरहित और पूर्णतया निश्चल (Passive) है। **जैन सिद्धान्तानुसार वह अनन्त विकाश और पूर्णताकी शक्तियोंका धारक है और सदैव क्रियावान है।** फलतः हमें अर्हत भगवानके सिद्धान्तोंको एक यथार्थ दर्शन मानना चाहिए जो कि एक आलोचनात्मक भावसे प्रारंभ होता है, **सूफीमतसे भी गहरा पैठता है और अन्य भारतीय दर्शनोंकी भांति अपने निजी विचार, नियम और तत्वोंको निर्मित करता है।**

यह कहा जा सक्ता है कि जैन और वैशेषिक दर्शन एक दूसरेके अति सदृश हैं और एक दूसरे पर सरल रीत्या घटित की जासक्ती है। अणुओं, आकाश, काल और धर्मके सिद्धांत एवं आत्माका सिद्धान्त दोनों ही धर्मोंमें अनुमानतः एक समान हैं। तो भी भिन्नताकी बात कुछ कम दर्शनीय नहीं है। अपने बहुसंख्यक सिद्धान्तोंकी परवा न करती हुई वैशेषिक फिलासफी परमात्माका एक सिद्धांत मानकर (Monistic) चक्र खा जाती है जब कि जैनधर्म अंततक बहुसंख्यावाद (Pluralilstic) है।

सम्पूर्ण करनेके लिए अवश्य ही जैन सिद्धान्तके कुछ तत्व बौद्ध, वेदान्त, सांख्य और वैशेषिक दर्शनोंके सदृश हैं परन्तु इससे उसके स्वतंत्र विकास और स्वाधीन उन्नतिमें कोई बाधा नहीं पड़ती है। यदि अन्य भारतीय दर्शनोंसे इसमें सादृश्य भी पाए जाते हैं तो इसके अपने निजी विशेषण और उल्लेखनीय भेद भी हैं।

अनुवादक—**कामताप्रसाद जैन—देहली।**

* यहां फिर लेखकको यह जतलाना आवश्यक प्रतीत होता है कि यह उसका मत नहीं है कि सांख्य भ्रान्तवाद है अथवा जैनधर्म पुद्गलवाद।

नोट-एक विद्वान् बंगालीके दर्शन संबंधी मुकाबलेके अंग्रेजी लेखका अनुवाद करना कठिन कार्य है। यद्यपि अनुवादकने बहुत सावधानी की है तब भी त्रुटि रहजानी संभव है। जहां कोई भ्रम पड़े असली लेखसे मिला लेना चाहिये। यद्यपि लेखकने कहीं २ कुछ स्पष्ट नहीं लिखा है जैसे धर्म, अधर्म, आकाश, कालको पुद्गल कहना। इनको अजीव लिखना था तथा पुद्गलसे भिन्नता बतानी थी। तौभी लेखकने जो जैन दर्शनको बौद्ध, चार्वाक, वेदान्त, नैयायिक, सांख्य व योगके अपूर्ण सिद्धांतोंके मुकाबलेमें पूर्ण व बुद्धिग्राह्य दिखलाया इसके लिये हम लेखकके सुविचारके कृतज्ञ हैं। लेखकने **जैन सिद्धांत** को स्वतंत्र सिद्धांत प्रगट किया है। यदि लेखक जैन धर्मके ६ द्रव्य तथा सात तत्वोंकी महत्वता अन्य दर्शनोंसे मुकाबला करके बताता तो और भी उत्तम होता। लेखकने यह तो स्पष्ट बता दिया है कि जैनमत बौद्धमतसे नहीं निकला परन्तु बौद्ध मतको भी जैन मतसे निकला नहीं माना है। इस बातपर लेखकको पुनः विचार करना चाहिये। संभव है क्षणिक बाद पूर्वसे हो पर बौद्धधर्मका ढांचा जैन धर्मसे ही कुछ लेकर घड़ा गया है। गौतम बुद्धकी जीवनी बौद्धधर्म स्थापित किया ऐसा बताती है। यद्यपि पूर्वमें गत बुद्धोंका भी वर्णन करती है परन्तु गौतमको जन्मसे बुद्धमती नहीं मानती है। लेखकने अपने शुद्ध भावसे जैन दर्शनका महत्व प्रगट किया है। इस लेखकसे और भी लेख प्राप्त कराने चाहिये। लेख मनन योग्य है।

ब्र० शीतलप्रसाद।

हम दीर्घजीवी कैसे होसक्ते हैं।

आत्मा वै पुत्रनामासि स जीव शरदः शतम् (निरुक्त ३। ४।) ॐ तच्चक्षुर्देवहितं पुरस्ताच्छुक्रमुच्चरेत् पश्येम शरदः शतं जीवेम शरदः शतँ शृणुयाम शरदः शतं प्रब्रवाम शरदः शतमदीनाः स्याम शरदः शतं भूयश्च शरदः शतात्। (यजुर्वेद अध्याय ३६ मं० २४)

इन दोनों वचनोंसे विदित है कि मनुष्यकी साधारण आयु सौ वर्षकी है। विलायतके प्रसिद्ध डाक्टर सर जेम्स क्रिस्टन ब्राउन लिखते हैं कि—"मेरी समझमें मनुष्यको अपनी आयुकी अन्तिम सीमा तक पहुँचनेका प्रयत्न करना चाहिये।" डाक्टर फ्लोरेंसकी तरह मैं भी जीवनकी सीमा सौ वर्ष मानता हूँ। इससे स्पष्ट ज्ञात होता है कि प्राचीन और नवीन आयु सीमा सम्बन्धी विचारोंमें कोई विशेष अन्तर नहीं।

यह अभिलाषा प्रत्येक मनुष्यके हृदयमें पायी जाती है कि वह स्वास्थपूर्वक बहुत काल तक जीवित रहे। वह वृद्धावस्थासे डरता है। प्रसिद्ध कवि शेक्सपियरके वचनोंमें (Sous teeth, sauseyes, sause taste, sause everything) दाँत, आँख और स्वादादिरहित शैशवकालको फिर दूसरी बार कोई प्राप्त होना नहीं चाहता है।

प्रश्न यह है कि किस प्रकार हम जीवन व्यतीत करें, जिससे वृद्धावस्थामें भी हमारी इन्द्रियाँ साधारणतया कार्य करती रहें। इसके उत्तरमें डा० कहेंगे कि बलवर्द्धक दवाएं सेवन

करो। वैद्य कहेंगे कि पौष्टिक पाकादिका सेवन करो और ज्योतिषी उपदेश करेंगे कि नवग्रह-शान्ति करनेमें समर्थ हो, परन्तु दीर्घायु प्राकृतिक नियमोंके पालनपर निर्भर है। उन नियमोंका ज्ञान प्राप्त करना हमारा प्रथम कर्तव्य है। मनुष्य जीवनके लिए वायु अत्यन्त आवश्यक है। मनुष्य विना जलके घंटों जी सकता है, परन्तु विना वायुके एक मिनट भी जीवित नहीं रह सकता। शुद्ध वायु मनुष्यको स्वस्थ बनाती है और अशुद्ध वायुसे वह रोग ग्रसित होजाता है। इसी कारण नगरके रहनेवालोंकी अपेक्षा ग्रामीण अधिक पुष्ट और बलवान् होते हैं भारतकी जन संख्या ९९ प्रति सैकड़ा ग्रामोंमें निवास करती है। प्राचीन समयमें नगरोंकी भी संख्या बहुत न थी।

वायुसे उतरकर दूसरी आवश्यक वस्तु जल है। जलके ऊपर भी मनुष्यका स्वास्थ्य निर्भर है। अशुद्ध जल रोगका कारण है। प्रत्येक स्थानके जलमें भेद होता है। पञ्जाबके जलमें पाचनशक्ति अधिक है। बङ्गालका जल अधिक पुष्टिकारक नहीं है, बल्कि मैलेरियादि ज्वरोंका उत्पादक है। किसी मनुष्यके शरीरकी रचना और उसके माता पिताके शरीरकी रचना देशके जल, वायुपर निर्भर है। परन्तु फिर भी ईश्वरने मनुष्यके हाथमें स्वास्थ्यकी बागडोर देदी है। "रसासृङ्मांसमेदोऽस्थिमज्जाशुक्राणि धातवः"। ये ही सात धातुयें हैं। इन्हींसे शरीर बना हुआ है। इनमें प्रधान और सबसे अनमोल वीर्य है। कहा गया है कि—जो वीर्य्यको रोकता है वही वीर है। वीर्यकी महिमा कौन नहीं जानता। जो इस रत्नको नष्ट करके आरोग्यताकी अभिलाषा करता है, वह विना बुनियादके मकान खड़ा करना चाहता है। मनुष्यकी आयु इस बातपर निर्भर है कि उसने कितने समय तक ब्रह्मचर्य धारण किया है। ब्रह्मचर्य कालसे आयु चतुर्गुणी होनी चाहिए। यदि ब्रह्मचर्यका २५ वर्ष तक यथार्थ पालन किया है तो कोई कारण नहीं कि आयु सौ वर्ष की क्यों न हो। इसका यह अर्थ न लगाना चाहिए कि यदि जीवन भर ब्रह्मचारी रहे तो वह फिर मरे ही नहीं, परन्तु इतना सत्य है कि ५० वर्षका अखण्ड ब्रह्मचारी दो सौ वर्ष तक जीवित रहसकता है। हाँ, अकालमृत्युका ग्रास तो मनुष्य हर समय बनसकता है। यदि २५ वर्षसे पहले जिसने वीर्य नष्ट करदिया है, वह चाहे जिस आयुमें मरे। उसकी मृत्यु असमय नहीं कहला सकती। कारण, यह कि उस समय धातु परिपक्व नहीं होती। ऐसे पुरुषकी आयु ६० या ७० वर्षसे ऊपर नहीं जासकती। आयुकी दीर्घता इस बातपर भी निर्भर है कि गृहस्थाश्रममें प्रवेश करके हम नियमपूर्वक रहते हैं या नहीं। २५ वर्षके ब्रह्मचर्य्यके पश्चात् यदि मनुष्य दुर्भाग्य-वश व्यभिचारी होजाय तो वह सौ वर्ष तक जीवित नहीं रहसकता। दूसरी ओर वह मनुष्य जो सामाजिक दुरवस्था या किसी अन्य कारणसे २५ वर्षसे पूर्व ही ब्रह्मचर्य नष्ट करचुका है, परन्तु अपना भविष्यका जीवन नियम पूर्वक व्यतीत करे तो वह वृद्धावस्थामें भी बलवान् रहेगा और चिरायुको प्राप्त होगा।

पञ्चविंशे ततो वर्षे पुमान् नारी तु षोडशे।
समत्वागतवीर्यौ तौ जानीयात् कुशलो भिषक्।

(सुश्रुत सूत्रस्थान ३५ अध्याय)

छान्दोग्योपनिषद् प्रपाठक ३ और खण्ड १६ में भी उत्तम ब्रह्मचर्यका काल ४८ वर्ष लिखा है। विवाहके पश्चात् विधिपूर्वक रहना योग्य है।

ऋतुकालाभिगामी स्यात्स्वदारनिरतः सदा।

(मनु० ३ । ४५ ॥)

यदि मनुष्य ऋतुगामी नहीं रहता, तो इसका अर्थ यह है कि वह पशुओंसे भी गया बीता है और यदि युवावस्थामें ही वार्धक्यको प्राप्त हो तो क्या आश्चर्य है ?

अब खानपानका विषय आता है। दीर्घजीवी होनेके लिये भोजनकी कोई तोल नहीं बतलायी जासकती। ठंडे देशवाले गरम देशवालोंकी अपेक्षा अधिक अन्न पचासकते हैं। आहार भी देश देशकी उपज और जल-वायुपर निर्भर है। मांसाहारी यह कहेंगे कि मांस तो सब काल और सब देशोंमें सेवन करने योग्य है। इस छोटेसे निबन्धमें उनके मतके विरुद्ध प्रमाण देना अनुचित जान पड़ता है। जिनको इस विषयमें कुछ ज्ञान प्राप्त करना है वह विलायतके प्रसिद्ध डाक्टर अलेक्जेण्डर हेग-रचित ग्रन्थोंका अवलोकन करें। इस बातकी पुष्टिमें हम संसारके प्रसिद्ध शाकाहारियोंके कुछ नाम देते हैं। मनुभगवान्, महात्मा बुद्ध, महावीर, सुकरात अरस्तु, स्पिनोजा, वाल्टायर, गोल्डस्मिथ और शूपिनहार इत्यादि महानुभाव मांसाहारीके विरुद्ध थे। शीतल जलके अतिरिक्त मदिरा, तम्बाकू, चाय, ककेवादिक मादक वस्तुओंका उपयोग सर्वथा त्याज्य है। संसारमें प्रत्येक मादक वस्तुके लाभ सुनानेवाले 'महानुभाव' प्रत्येक देश और प्रत्येक जातिमें मिल सकते हैं। हम उन सबके लिये एक प्रसिद्ध अमरिकनका उत्तर पर्याप्त समझते हैं। उस अमरीकनका कथन है कि "मादक वस्तुके सेवकोंकी बुद्धि पहिले ही नष्ट हो जाती है। वे इस बातको नहीं समझ सकते कि अमुक वस्तु हमारे लिये विषैली और हानिकारक है। उसका मद एक प्रकारकी धूप है जिसको पाकर हम उस विषैली वस्तुके सेवनका समर्थन करते हैं। मदिराके उपासक संसारमें सबसे अधिक हैं।" इसके विषयमें केवल इतना ही कहना आवश्यक है कि 'जाति सुरा, विद्या सुरा, सुरा स्वर्गको धाम' के भक्त योरुप और अमेरिकामें बहुत हैं। परन्तु वहाँसे भी ब्रह्मांडी (ब्रांडी) देवीकी प्रतिष्ठा उठ रही है।

अब अन्तिम और सबसे मुख्य विषय व्यायाम का है। मनुष्यका शरीर काम करनेके लिये बनाया गया है। जो हाथ पैर नहीं चलायेगा, उसके शरीरमें आलस्यरूपी काई लग जायगी। इसी कारण महात्मा ईसाने कहा था कि 'Earu thy buad by the Sweet of thy brow' अपनी रोटी मेहनत करके कमाओ। विलायतके प्रसिद्ध नाटककार ब्रेडशाने कहा है कि "स्कूल, कचहरी, दफ्तर और फैक्टरी इत्यादिक सब कारागार हैं।" जिनको इन कारागारोंमें शुद्ध वायु नहीं मिलती हैं, उनको चाहिये कि वे प्रातःकाल अथवा सायंकाल कमसे कम पांच चार मील टहला करें। यदि अवकाश न हो तो डंड, बैठक, डंबिल मुग्दरादिकसे व्यायाम किया करें। एक स्थान पर बहुत देर खाली बैठे रहनेसे मनुष्यका शरीर स्थूल और शिथिल होजाता है। यही कारण है मज़दूर दुकानदारोंकी अपेक्षा कम मोटे, परन्तु

अधिक बलवान् और नीरोग्य होते हैं।

अन्तमें यह कहना आवश्यक है कि दीर्घायु किसी एक नियमके पालनपर निर्भर नहीं। यह जल, वायु, वीर्यरक्षा, खान-पान, व्यायाम और नीरोगताके अन्य नियमोंके पालनपर निर्भर है। भाग्यपर विश्वास करनेवाले यह कहेंगे कि-

आयुः कर्म च वित्तं च विद्या निधनमेव च।
पञ्चैतान्यपि सृज्यन्ते गर्भस्थस्यैव देहिनः॥

यदि आयुका भाग्यके अधीन होना भी सत्य मानलिया जाय तो भी इन नियमोंके पालनसे मनुष्य दुर्बल, रोगी, आलसी और दुःखी नहीं रहेगा। "वैद्य"

क्या चाहिए?

१-हमारे देशके प्रत्येक मनुष्यको यह ज्ञान होना चाहिए कि हम अत्यन्त दरिद्र हैं और दरिद्रताके कारण ही हम चिररोगी हैं। रोग और दारिद्र्यका आपसमें अत्यन्त घनिष्ठ सम्बन्ध है। रोगी शब्दका अर्थ है-"जीते ही मरना"।

२-हमको यह ज्ञान होना आवश्यक है कि हम जिन रोगोंसे ऊजड़ होते जाते हैं, वे सब निवार्य हैं और पृथ्वीमें वे सदासे हैं, किन्तु स्थायीरूपसे कहीं नहीं रहने पाते। केवल हमारे देशमें ही वे चिरस्थायी प्रबन्ध करके आये हैं।

३-हमें तीसरा ज्ञान यह होना चाहिए कि धर्मके नामसे जिन देशाचारोंकी जड़ जमी हुई है, वास्तवमें वह धर्म्म नहीं है। वह हमारे लिए पाशरूप है।

४-हमारे चौथे अनुभवका विषय होना चाहिये-अपनी अवस्थाको जानना। हम धर्म, समाजके बन्धन, समाजके शासन और देशज्ञान इन सबसे पतित होकर स्वार्थपरायण होगये हैं। इसी कारण आज हम सब अपने अपने मनमाने कार्योंके करनेमें स्वतन्त्र होगये हैं। इसीसे समाजका शरीर गलकर नष्ट-भ्रष्ट होगया है।

५-हमारे पाँचवें ज्ञानका विषय होना चाहिए शिक्षा। हम जिस शिक्षाके मोहसे मुग्ध होरहे हैं, जिसके जालसे समस्त भारतीय समाज और भारतीय जीवन बँधा हुआ है, वह शिक्षा प्राकृतिक शिक्षा नहीं है। वह वास्तवमें पाशरूप है और दासताकी जंजीर है। योग्य डाक्टर, वकील आदि ढालनेके लिये तो यह शिक्षारूपी मैशीन ठीक हो सकती है, किन्तु इससे पूर्वकालकी शिक्षाकी समान शरीर, मन और भावोंमें स्फूर्त्ति उत्पन्न नहीं हो सकती। आधुनिक शिक्षाने बाजीगरकी समान सृष्टि रच रक्खी है। इसके कठपुतलीकी समान हाथ तो है, पर काम नहीं करते। नेत्र हैं पर देख नहीं सकते। कान हैं, किन्तु सुनते नहीं।

भारतवासियोंकी नस नसमें इस बातका ज्ञान होना चाहिये कि जिस शिक्षापर भारतवासी मुग्ध होरहे हैं, वह शिक्षा सब मनुष्योंको पङ्गु, मूढ़ और जड़बुद्धि बना देती है। इतनेपर भी इस शिक्षाके लिए हम लोग दलदलमें फँसते चले जारहे हैं और स्कूल, कालेजोंमें रिश्वतें देदेकर उसकी दीवारको दृढ़ कर रहे हैं।

६-हमारी छठी अनुभूति यह होनी चाहिए कि-संसारमें कबसे हमारा नाम विख्यात हो। हमारे पितृ-पितामहादि कैसे योगी थे, कैसे

त्यागी थे, कैसे परिश्रमी थे, हम वैसे नहीं हैं। और हमारी सन्तानें हमसे भी अधिक निकृष्ट हैं। इसके लिये इस समय मन्दाग्नि, प्रमेह, क्षय, मलेरिया, इन्फ्लुएञ्जा आदि रोग हमें सदा ही चारों ओरसे घेरे रहते हैं।

हमको यह ज्ञान होना विशेष आवश्यक है कि वायु ही यथार्थ प्राण है। अन्न ही प्राकृत लक्ष्मी हैं और गौ ही प्रकृती माता है।

हमारे देशके प्रत्येक मनुष्यको यह बुद्धि होनी चाहिये कि स्वास्थ्य सम्बन्धी ज्ञान केवल चिकित्सकोंका ही ज्ञेयकर्म नहीं है, प्रत्युत देशके सभी मनुष्य स्वास्थ्यके विषयमें जब एक साथ ध्यान देंगे तभी हमारा कल्याण होगा अन्यथा नहीं।

हमारी यह धारणा होनी चाहिये कि भारतवासी अकर्मण्य नहीं है, जुआरी नहीं, चोर नहीं, और असमर्थ नहीं है। जो लोग इन बातोंको बहुत पुरानी बतलाते हैं, वे अपनी स्वार्थसिद्धिके लिए ऐसा कहते हैं। वे हमारे भोगी शरीरको हाथीकी समान स्थूल और हमारे ज्ञान वस्तुओंको हाथीके नेत्रोंकी समान छोटा कर देते हैं। हमने इस समय स्पष्टरूपसे इस बातका विश्वास कर लिया है कि आज यथार्थ सत्यको प्राप्त करनेकी शक्ति भी हममें नहीं है। बहुत दिनोंके पुराने कैदीके छूटजानेपर भी सहसा यह विश्वास नहीं करा जासकता कि वह मुक्त है। इसी प्रकार हमारी स्थिति है।

"वैद्य"

अधोगति के उन्नति।

આજે અમાસ અને રવીવાર હોવાથી મુંબઈમાં ઘણા બજારો બંધ હતાં. ઓફીસો અને બેંકો પણ બંધ હતી એટલે કામકાજ નહોતું. દિવસે તેમ રાત્રે નાટકના ખેલો હતા, પરંતુ આજે "શ્રી **ગુજરાત દિગંબર જૈન યુવક મંડળ**"ની પાક્ષિક સભામાં" જવાનું હોવાથી નાટકમાં જવાનો વિચાર મુલતવી રાખ્યો હતો, અને કોઈ સોબતી મળે તો ચોપાટી કે પાલવે જવાનો વિચાર હતો. એટલામાં અચાનક કાન્તિલાલ મળ્યા અને અમે બંને સાથે પાલવાને કીનારે ફરવા ગયા, અને એક બાંકડા પર બેસી દરીઆની ઠંડી લહેરોનાં મોજાં નીહાળતા હતા, એટલે વાર્તાલાપ શરૂ થયો.

કાન્તિલાલ—કેમ ભાઈ શાન્તિલાલ, આટલા દિવસ ક્યાં ગયા હતા?

શાન્તિલાલ—ભાઈ કાન્તિલાલ, તમો જાણતા હશો કે હું **બાલીસણામાં** મળેલી શ્રી દિગંબર **જૈન હિત વર્દ્ધક** સભાની બેઠકપર દેશમાં ગયો હતો. ત્યારથી દેશમાંજ હતો એટલે મળી શકો નહોતો.

કાન્તિલાલ—સભામાં ગયા પણ ત્યાંના સમાચાર તો સમજાવો કે નાહક ગાડીભાડાં ભરી પાછા આવ્યા અને દોઢ રૂપીઆ ચાંલ્લાનો આપી આવ્યા એટલુંજ.

શાન્તિલાલ—અન્યું તો એમજ છે. સભામાં દરરોજ બેચાર ભાઈનાં ભાષણો થતાં તે શાન્તિથી સાંભળવાને બદલે કેટલાકો ખોટો ઘોંઘાટ કરતા હતા એટલે બોલનારને કે સાંભળનારને રસ પડતો નહોતો, અને ત્રણ દિવસની બેઠક તેમાં જમણનું આમંત્રણ આવ્યું તે સ્વીકારવું કે નહિ તેની ભાંજગડમાંજ બે દિવસ ગયા એટલે બીજું કંઈ કામ થયું નહિ, અને બે દિવસના રૂ. ૪૦૦)નો ખર્ચ ફોગટ ગયો. ઊતારો લેતાંરે ઘોડાઓની ચંદી (દાણો) આપવાનો અને મોઢાઈમાં જલેબીનો વધારો

કરી ગ્નાતી સુધારા કરવાને બદલે કુધારાનો વધારો થયો. તે સામે ભાઇ મણીલાલ ચુનીલાલ કોઠારીએ સખત વિરોધ કર્યો પણ આ બેઠકમાં તો વ્યર્થ ગયો.

કાન્તિલાલ—ભાઇ શાન્તિલાલ, આપની વાત સાંભળી મને બહુ દુઃખ થાય છે. દરેક સમાજ જીવાઇ આગળ વધે છે, ત્યારે આપણી સમાજને ઝળવતાં કેટલાં વર્ષ થશે તે કલ્પી પણ શકાતું નથી. કહે છે કે ગ્નાતિમાં કુધારા છેજ ક્યાં અને કદાચ હોય તો તે આપણા પંચથીજ દૂર થઇ શકશે. સભાના હાથમાં સુધારા કરવાની સત્તાજ શું છે?

શાન્તિલાલ—ભાઇ કાન્તિલાલ, આપની સમજફેર થાયછે. હું કબુલ કરૂં છું કે આપણી ગ્નાતિમાં પહેલા કરતાં કેટલાક સુધારા થાય છે. તેમ બીજી ગ્નાતીઓ કરતાં આપણી ગ્નાતિનું બંધારણ અને નિયમો ઊત્તમ છે અને પંચ મારફત સુધારાઓ થાય તો તેની અસર સારી થાય તેમ છે. કેટલાક કુધારાઓ એવા છે કે આપણી સભા મારફત અગર આપણે પણ દૂર કરી શકીએ તેમ છીએ.

કાન્તિલાલ—ભાઇ, આપનું કહેવું સત્ય હશે. આપ કહો છો તેમ કયો સુધારો થઇ શકશે તે સમજાવશો?

શાન્તિલાલ—પ્રથમ આપણી જમણવારો તરફ દૃષ્ટિ કરીએ તો જણાશે કે આપણને જમણવાર જમાડતાં અને જમતાં આવડતું નથી અને તેથી આપણી જમણવારો આનંદને બદલે અશાન્ત નીવડે છે. જો જમાડનાર બરાબર વ્યવસ્થા રાખે અને જમનાર સંતોષ અને શાન્તિ રાખે તો જમણવારો આનંદદાયક થઇ શકે. ભાઇ બરાબર વિચાર કરતાં જણાશે કે આપણી જમણવારોને મનુષ્યોના સંમેલનને બદલે પ્રાણીઓનો મેળો કહી શકાય. આ કહેવું તે આપણા માટે યોગ્ય નથી પણ તમો કબુલ કરશોકે તેમાં લેશ ભાર પણ અતિશયોક્તિ નથી તેમ જમણવાર કરનાર એકલાનો પણ દોષ નથી. માત્ર સમુહ તરફથી મદદના અભાવે પાંગળા એટલે અશક્ત જેવા હોય છે. જો આપણામાંનો દરેક જણ આમ માને તો આપણે એકત્ર રૂપે અશક્ત કે પ્રમાદવાળાને દોડાવી શકીએ.

કાન્તિલાલ—ભાઇ, આપનું કહેવું સત્ય છે પરંતુ આપણે ત્યાં જમણવારમાં હાલ તુરત કેવી રીતે કયા કયા કુધારાઓ દૂર થવા સંભવિત છે તે સમજાવશો.

શાન્તિલાલ— (૧) આપણી જમણવારોમાં ચોખલા પ્રતિષ્ઠાના જમણમાં તો બિલકુલ નિયમ સચવાતોજ નથી. જેમ આવે તેમ બેસે. જમવાનું હાથે પણ લઈ આવે અને જમીને ચાલતા થાય." નાનાં ગુંચળા વળી બેસે, પંગત જેવું કાંઇ જણાયજ નહિ. આવી રીતની જમણવાર આપણી કોમને હિણપદ લગાડે તેવી છે માટે તેમાં સુધારો કરવાની જરૂર છે. ન્યાત, પાખી અને બીજા જમણોમાં પંગતો પાડવી જોઈએ "આવે તેમ જમે અને ચાલ્યા જાય" એ રીવાજનો સદંતર નાશ થવો જોઇએ.

(૨) પુરૂષો અને સ્ત્રીઓ બંનેની હારો જુદી જુદી પાડી પુરેપુરી પંગત બેસે ત્યારે પીરસાય અને દરેક ચીજો તેમજ પાણી દરેક ભાણે પહોંચે તેવી તજવીજ કરવી જોઇએ. હાલની ચાલુ રૂઢી અને હવાડની રૂઢી ફેર છે એમ કોઇ કહી શકે નહિ.

(૩) પંગત જમી ઉઠે ત્યાં સુધી પીરસનારાઓ બધી વસ્તુઓ પંગતમાં ફેરવે જય અને બધા માણસો જમી રહે ત્યારે બધાએ સાથે ઊઠવું—તે પહેલાં વચ્ચેથી કોઇએ ઉઠીને જવું નહિ. કારણ હાલની રૂઢિને લીધે જમનારાઓ પાછળથી નહી પીરસાય એવી ગણત્રીથી ભાણાંમાં વધારે લે છે અને છેવટે એંઠું મુકે છે તે ઉપરાંત કેટલાકો જેઓ શાન્ત પ્રકૃતિના હોય કે પીરસનારાઓને ઓળખતા નહિ હોય તેઓના ભાણે કેટલીક વસ્તુઓ પહોંચતી પણ નથી અને જ્યાં પીરસાય છે ત્યાં ઠેકાણું પણ રહેતું નથી એટલે **ખાવું થોડું અને** બિગાડ ઘણો થાય છે.

ચોખાલાના જમણમાં સવારે સાતથી રાતના આઠ સુધી ગમે તટલી વખતે જોઇએ તે

વખતે જમવા જાય તોપણ જમાડવાનો રીવાજ છે, તે બંધ કરી "સવારે ૯ થી ૧૨ અને સાંજે ૪ થી ૭ સુધી" જમાડવાનો ટાઇમ નક્કી થાય તો જમણ કરનારને, પીરસનારાઓને અને જમનારાઓને સગવડ થાય અને બિગાડ થતો અટકે.

કાન્તિલાલ—આટલા સુધારાઓ તુરત થઇ શકે તેમ છે. માત્ર રિવાજ અને પહેલ કરવાની જરૂર છે. એટલામાં એક વિક્ટોરીઆમાં નગીનદાસ અને જયન્તીલાલ આવી પહોંચ્યા અને તુરતજ નગીનદાસે કહ્યું-કેમ ભાઇ શું ગપ્પાં ચાલે છે ?

શાન્તિલાલ—એ તો હમારી જમણવારોમાં કયા કયા કુધારા છે અને તે કેમ દૂર કરી શકાશે તેની શોધખોળ ચલાવીએ છીએ. કેમ તમારે ત્યાં કંઇ તેવું છે ?

જયન્તીલાલ—વાહ ભાઇ શાન્તિલાલ, તમે કેવી ભૂલ કરો છો. અરે આપણામાં સર્વથી સુધરેલું શહેર તો સુરત ગણાય છે. જ્યાં દાનવીર જૈનકુલભૂષણ માણેકચંદ શેઠ જૈનનરરત્ન થયા છે અને દિગંબર જૈન, જૈનમિત્ર જેવાં પત્રો પ્રગટ થાય છે. તેમના વિદ્વાન સંપાદક અને પ્રકાશક મુલચંદભાઇ જેવા સાહસિક, જ્ઞાતિ સુધારા તરફ હંમેશાં ધ્યાન ખેંચે છે ને દેશ સેવા કરવામાં પણ પહેલે નંબર છે તેમજ તેમના સાથી ભાઇ સરૈયાજી જેવા સમાજ અને દેશસેવક હોય ત્યાં કુધારા કે કુરિવાજનું નામજ ક્યાંથી હોય ?

નગીનદાસ—ભાઇ જયન્તિ૦ પીળું એટલું બધુંજ સોનું છે તેમ કેમ કહેવાય ? આપણા "હુંમડ" ના ત્રણે અક્ષર વાંકા કહેવાય છે એટલે સરૈયાજી ને મુલચંદભાઇ જેવાઓની સખત મહેનત હોવા છતાં કુધારાનું જડમૂળ જવાને હજુ ઘણીવાર છે. એ તો ઝાડને નામે ફળ વેચાય છે. કંઇ બધાજ વિદ્વાન અને સુધરેલા હશે તેમ સમજતા નહિ.

કાન્તી૦—અરે ભાઈ, એ તો બાંધી મુઠીજ લાખની છે. હું થોડા વખત પર સુરત નગીન૦ ને ત્યાં ગયો હતો ત્યારે ત્યાં જમણવાર હતી એટલે ન્યાતમાં મારે પણ જમવા જવાનું હતું. જમવાનો વખત થયો એટલે બધા રેશમી પીતાંબર અને અબોટીયાં પહેરી ગળે રેશમી રૂમાલ બાંધી જતા હતા એટલે મારે પણ પીતાંબર પહેરવા અને જમણ બદલ કેટલીક વાતચીત થયેલી તે સાંભળશો એટલે જણાશે.

નગીન૦—કાન્તીલાલ-ભાઇ, આ પીતાંબર પહેરો કારણ તમારા દેશની શેફક માફીયા ધોતીયું પહેરી પંગતમાં બેસાશે નહિં.

કાન્તી—અરે ભાઇ ! તમારા રેશમી પીતાંબર કરતાં હમારૂં ધોતીયું હજાર ઘણું ઉત્તમ છે કારણ એક પીતાંબરનું રેશમ ઉત્પન્ન કરવામાં કેટલા કીડાઓની હિંસા થાય છે તેનો વિચાર કરો, જ્યારે હમારા ધોતીઆમાં શુદ્ધ સુતર વાપરેલું છે એટલે શુદ્ધ સુતર ઉત્પન્ન કરતાં બીલકુલ હિંસા થતી નથી. તમારાં પીતાંબર ભાગ્યેજ ધોવાતાં હશે ત્યારે હમારા ધોતીયાં દરરોજ ધોવાતાં હોવાથી શુદ્ધ રહે છે એટલે ધોતીઆં કરતાં પીતાંબર ઉત્તમ છે તેમ તમો પણ કબુલ કરશો નહિ.

નગીન૦—તમારૂં કહેવું સત્ય છે, પણ જ્ઞાતિ રીવાજ હોવાથી હાલ તો પીતાંબર પહેરી જમવા ચાલો.

કાન્તી૦—ચાલો કહી હમો સાથે પંગતમાં બેઠા ત્યારે વાડીમાં પ્રથમ એક પંગત ઊઠેલી તેની એંઠી થાળીઓ પડેલી હતી તે કેટલાક ભાઇઓ હાથોહાથ ઊપાડતા હતા અને તે ગોલણો (મજુરણો)ને આપતા તે થાળીઓ ગોલણો જેવી તેવી નામની માજી આપતી તે બીજાઓ ઊપાડી લેતા તેમાં એંઠી તો રહેતીજ એટલે તેને ઘેંઇને ઊપયોગમાં લેતા હતા તે જોઇ મને ઘણો પસ્તાવો થતો અને આ વાત મુલચંદભાઇ ને સરૈયાજીને જણાવવા જવું હતું કેમકે તેઓ તો આ જમણમાં જણાતા નહોતા પણ ટાઇમ થઇ જવાથી હમો ગાડી પર ચાલ્યા ગયા.

નગીન૦—અરે ભાઇ, એટલુંજ નહિ પણ ઘણે સ્થળે હજુ જ્ઞાતીમાં કેટલાક બીજા કુધારા છે

જેવા કે લગ્ન પ્રસંગે બે ત્રણુ કે પાંચ ન્યાત કરી મંડપમાં રાંડ-વેશ્યાને બોલાવી નાચ કરાવી હજારોના પાણી કરે છે, જ્યારે ધાર્મિક સંસ્થાઓને મદદ આપતાં ટાઢ ચઢે છે.

શાન્તી૦—આવી નિર્લજ રૂઢીઓ તરફ સમાજનું ધ્યાન ખેંચવા દિગંબર જૈન–અને જૈન મિત્ર"માં જાહેર લખાણો કેમ નથી લખતા?

નગીન૦—અરે પણુ" આંધળા આગળ આરસી" જેવી વાત છે. હમારે ત્યાં કેટલાંક તો જાણુતા પણુ નથી કે સમાજનાં કયાં પત્રો છે અને તે મંગાવી વાંચવાની માથાફોડ કરે શું મલવાનું છે તેવા વિચારના પણ છે એટલે લખવું ફોગટ છે.

શાંતી૦—ભાઇ, તમારી ભૂલ થાય છે. થોડા ઘણા પત્રો મંગાવી વાંચશે અને તે બીજાઓને વાત કરશે તોપણુ તેની અસર અવશ્ય થશે પણ આજે જયંતીલાલ તું કેમ ઉદાસ જણાય છે!

જયન્તી૦—ભાઇ, આજે દેશમાંથી કાગળ આવ્યો છે તે વાંચ્યો ત્યારનો શું કરવું તેના વિચારમાં પડેલો છું એટલે તમારી વાતમાં મને રસ પડતો નથી. ખરેખર "ચિંતાથી ચતુરાઇ ઘટે" એ કેહવત મારે માટે આજે સત્ય છે.

કાન્તી૦—ભાઇ, જરા સમજાવો તો ખરા કે એટલું બધું કાગળમાં શું લખ્યું છે કે આટલા બધા વિચારના સમુદ્રમાં ગોથાં ખાઓ છો?

જયન્તી૦—શું કહું ભાઇ, કહેતાં જીભ અચકાય છે છતાં આપના આગળ કહ્યા સિવાય છુટકો પણ નથી. આ સાલે મણીલાલના લગ્ન થનાર છે. નટવરલાલનો **વેવીશાળ** થયો છે એટલે તેની વહુનું વસંત મોકલવાનું લગ્નો પહેલાંજ છે. લીલાવંતીના ભાણીઆ અમૃતલાલનું પણુ લગ્ન થનાર છે એટલે મોસાળું કરવું પડશે. ચંપીનું **વસંત** તેડાનું છે અને રતનનું **આણું** તેડવાનું છે એટલે ખર્ચને કેમ પુગી વળવું તેનોજ વિચાર કરૂં છું.

નગીન૦—મારા સાહેબ, એમાં તે શું છે કે આટલા બધા વિચારમાં પડેલા છો. તમારે ક્યાં પૈસાનો ટોટો છે અને લેવા જાઓ તો ક્યાં મળે તેમ નથી? અને તેમાં એટલો બધો શું ખર્ચ થવાનો છે કે આમ હિંમત હારી જાઓ છો.

જયન્તી—ભાઇ, ખર્ચની તો વાતજ નહિ કરશો. જુઓ સાંભળો. મણીલાલના લગ્નમાં પલ્લા માટે **૩૦ થી ૩૫ તોલા સોનું ૨૫૦ તોલા ચાંદીના** મળી રૂ૦ ૧૦૨૫) તો તેજ થયા પછી અમદાવાદ કપડાં લેવામાં ૨૫૦ થી ૩૦૦ વરોડી અને ચાંલ્લાના રૂ૦ ૧૫૦) અને માંડવે સગું આવે તેના ભોજન ખર્ચના રૂ૦ ૧૦૦) મલી રૂ૦ ૧૫૨૫) જોઇએ. નટવરલાલની વહુના વસંતમાં સોના ચાંદીના દાગીના અને કપડાનાં મલી રૂ૦ ૫૦૦) અમૃતલાલના મોશાળામાં હમારી ઇજત આબરૂ પ્રમાણે આઠ દશ તોલાની કંઠી રૂ૦ ૫૦) ચાંલ્લાના વહેંચવાના રૂ૦ ૫૦) નાં કપડાં રૂ૦ ૧૦૧) રોકડા આપવાના મલી રૂ૦ ૪૫૦) થશે વસંત અને આણું તેડવામાં કપડાં ભોજન ખર્ચ અને ચાંલ્લા વહેંચવાના રૂ૦ ૧૦૦૦) થશે વળી એક માસ પછી મણીલાલની વહુને તેડવા સારૂ પંદર માણસ તો ઓછામાં ઓછું આવશે અને તે પંદર દિવસ રહેશે એટલે રૂ૦ ૧૦૦)નો ખર્ચ મલી કુલે **રૂ૦ ૩૫૭૫**)નો ખર્ચ આ સાલે છે. વળી આવતી સાલે નાનીનું લગ્ન લેવાનું છે તે ખર્ચ તો જુદુંજ.

કાન્તિલાલ— આપે મણીલાલના લગ્નમાં ૩૦ થી ૩૫ તોલા સોનું ગણાવ્યું પણ આપણા પંચે હવે તો ૨૦ તોલા પલ્લામાં આપવાનો ઠરાવ કરેલો છે તેમાં ૩) તોલા ચુલ્લાનું તો બાકી રાખે છે એટલે ૧૭) તોલા જોઇએ તેને બદલે બમણી બાદ કેમ કરો છો?

જયન્તી૦—આપણા પંચે કાયદો બાંધ્યો છે પણુ તે તોડવાની યુક્તિ આપણા આગેવાનોએ તુરત શોધી કહાડેલી છે કે પાંચ તોલાનો નકર દાગીનો હોય તો ગામનું પંચ ચાર તોલા આંકે અને લાખવાલો ૧૦ તોલાનો દાગીનો હોય ત્યારે ૭ તોલા ગણાય. વળી મણીલાલનો વેવીશાળ કરતાં એક કંઠો પલ્લા ઉપરાંત ખાનગીમાં વધારે

આપવા કહેલી છે. કાંઢું તો વસંતમાં ચડાવેલું તે બંકાય નહિ અને પાછું લેવામાં શોભા નહિ. ચાંદીમાં પણ ૫૦) થી ૬૦) ભારના તોડા વટાવામાંજ જાય, એમતેમ કરી ગામના પંચની રૂબરૂ ૩૦ થી ૩૫) તોલા સોનું લઇ ૨૦) તોલા કાગળીઆમાં લખી કાયદા પ્રમાણે લીધાનું ગણાય છે. દરેક ઠેકાણે તેમ થાય એટલે ગુનેહગાર પણ કોણ ગણાય અને આંખ આડે કાન કરી ચલાવે જવાય. કારણ રંડાપો તો રોકડો. કદાચ—કન્યા રંડાય તો આટલું હોય તો બાઇ બેઠાં બેઠાં ખાય એમ કહી ચલાવે જાય પણ સામા પક્ષના શું થતા **હશે હાલ તેનો કોને છે વિચાર !**

કાન્તિલાલ—વાહ ભાઇ, યુક્તિ તો ઠીક. **"હાથીના દાંત બતાવવાના જુદા અને ચાવવાના જુદા"** ત્યારે આમ કરવું હતું તો કાયદો બાંધવા કોને તેમને કેદમાં પુર્યા હતા કે આટલો બધો ખાલી મોટા ભાઇ બનવામાં વડાઇ માની બેઠા છે એ તો આજેજ જાણ્યું પરંતુ ૫૦૦) નું વસંત અને મોસાળાં થાય આતે ક્યાંથી લાવી પુરૂં થાય. સમાજ આગેવાનો શ્રીમંત છે એટલે બધાજ શ્રીમંત હશે તેમ તેઓ જાણતા હશે પણ તેઓ શ્રીમંત સર્વે પોતપોતીકા ઘરના હશે. કંઈ કોઇનું ચલાવી આપતા નથી ને પંચમાં તો સર્વે સરખા ગણાય છે તો શા માટે પંચના કાયદાનું ઊલંઘન થાય છે ?

શાન્તિ૦—ભાઇ કાન્તિલાલ, ગરમ થયે તારૂં કે મારૂં શું વળનાર છે, આપણે ગમે તેટલાં ગળાં બેસાડીશું તે નકામાંજ છે એ તો જે કરતા હશે તેજ કરવાના. ધાર્યું તેમનુંજ થવાનું પણ સમય બદલાયો છે. દરેક પોતાની ફરજ શું છે તે સમજે છે. આ કુરીવાજ દેખાદેખી વધેલો છે અને જેટલા ચઢયા છે તેટલાજ પડવાના. આપણા ભાઇ જયન્તિલાલ પણ બહાર તો શ્રીમંતની ગણતરીમાં ગણાય છે પણ ગઇ સાલે રૂા.૪) ના ભાવે ૨૦૦૦ મણ અનાજ લીધું હતું. વળી કાપડ કપાસ અને વ્યાજે ધીરધારમાં રૂા. ૩૦૦૦) ઊઘરાણી પાડી હતી. ઘેર બે ઘોડા રાખો ભપકો પણ ઠીક રાખ્યો હતો. ઘાસ અને અનાજ મોંઘુ હોવાથી ગઇ સાલે ૪૦૦) ના ઘોડાં ૧૦૦૦) નું ખાઇ ગયાં અને વળીઆરે ખોટ જણાવાં આખરે વેચવાં પડયાં. બહાર તો વીસ પચીસ હજારની આસામી ગણાય છે એટલે આબરૂદારમાં ખપવા ઘરનું ખર્ચ પણ વધારે હોયજ. અવસરે પણ ખર્ચ મોભા પ્રમાણે કરેજ છુટકો. હવે ઊગરાણી અને અનાજના મલી રૂ૧૧૦૦૦) અને બે હજારની રોકડ ને ૪૦૦૦) નાં ઘર મલી કુલે ૧૭૦૦૦) નો અવેજ છે તેમાં ૧૦૦૦૦ તો દેવું છે. ઘરની મુડી ૭૦૦૦) ની તે ઘર અને ઊઘરાણી માં રોકાઇ ગઇ છે, તે હાલ આવે તેમ નથી. ૨૦૦૦) રોકડ છે તેમાંથી જે દેવાદાર તાકીદ કરે છે તેને થોડા ઘણા આપે છે. બાકી વેપારમાં મુડી ફેરવે છે. હવે ૨૦૦૦)મણ દાણા હતા તેમાં ૮૦૦૦)ની મુડી હતી પણ અનાજના ભાવ બેસી ગયા છે, એટલે હાલ તો ૩૦૦૦) ઉપજે તેમ છે.

એટલે મુદ્દલમાં પણ ૫૦૦) ની ખોટ છે અને આ સાલે ૩૫૦૦)નો ખર્ચ કરવાનો છે ને પાછુ દેવું કરવું પડશે. એટલે **"પાવો પાવાને હાથેજ ડુબશે"** એ કહેવત મુજબ શ્રીમંત આગેવાનો દરેકને શ્રીમંત જોઇ રૂઢિઓ વધારે જાય પરંતુ " ઘેર ઘેર માટીના ચુલા છે." તે તેઓને પણ દેખાશે એટલે ઠેકાણે આવી સુધારો કરશે.

નગીનદાસ—જયન્તિલાલની જ્યારે આવી સ્થિતિ છે તો દેવું કરી વસંત અને આણું તેડવાની શું જરૂર છે. જો નહિ તેડે તો નહિ ચાલી શકે ?

શાન્તી૦—ચાલી શકે પરંતુ બાપદાદાની ઇજ્જત આબરૂને લીધે અને શ્રીમંતાઇનો ડોળ બતલાવવા કરવુંજ જોઇએ. જો તેમ નહિ કરે તો લોકો સમજે કે તેમનું ઘર ઘસાઇ ગયું છે એટલે તેમના છોકરાઓનો કોઇ ભાવ પણ નહિ પૂછે, પણ ભાઇ જયન્તીલાલ, તમો મણીલાલના લગનમાં દાગીના તો મારા માગીને ચઢાવજો અને લગન ગયા પછી છ આઠ મહીને પાછા આપજો એટલે તરતનું દેવું તો ઓછું કરવું પડશે.

જયન્તી૦—હા, મારો પણ તેમજ વિચાર છે. ભાઇ વસંતને આંણુ તેડવાનો મારો વિચાર તો બિલકુલ નથી પણ ઘરમાં સમજાયા સમજતાં નથી એટલે લાચાર છું. **"આ તે અધોગતિ કે ઉન્નતિ"** કહો શું સમજાય ?

કાન્તિ૦—ભાઇ, માગીને દાગીના ચઢાવવા અને પછીથી પાછા લેવા એ તો અન્યાય ગણાય પણ ન્યાય અન્યાયનું છેજ કયાં. એ તો જેવા થાય તેવા થવુંજ જોઇએ. આપણને તો આ વાત બિલકુલ પસંદ નથી. આપણા પંચના ઠરાવો પ્રમાણેજ દરેક વર્તે તેવીજ તજવીજ થાય અને પંચના દરેક નિયમો પાળી શકે તેવી વ્યવસ્થા થાય તેજ યોગ્ય છે. આ તો આપણા હાથેજ આપણે છેતરાઇએ છીએ. જેઓ શ્રીમંતછે તેઓ ઘેર આવે ભલે સોનું મઢયાજ કરે પણ શું કામ કરતા હશે ?

શાન્તિ૦—જયન્તી ભાઇ, તમો આવતી સાલે નાનીનું લગ્ન લેવાનું કહો છો પણ તે વરને તો દમનો રોગ થયેલો અને કહે છે કે એ રોગ એવો ખરાબ છે કે કયારે અનિષ્ટ થાય તે નક્કી નહિ તો જાણીજોઇ તેવા વર સાથે લગ્ન કરવા તે હું તો યોગ્ય સમજતો નથી.

જયન્તિ—શું કરવું ભાઇ, હું પણ તે વિચારમાં છું. પણ હવે વેવીશાળ મુકાય કેમ અને આ સાલ લગ્ન લેવાનું હતું તે જ્યાં ત્યાં સમજાવી બંધ રાખ્યું છે પણ આવતી કાલે લગ્ન લીધા સિવાય છુટકોજ નથી. જુવો, પેલા નટવરલાલની છોડીનો વેવીશાળ કરેલો છે તે કહે છે કે તે વરને વાઇ આવે છે તે બદલ પંચમાં સંભળાવી ફેંસલો માંગ્યો. પંચે તેના જુવાબમાં વરને નટવરલાલના ગામમાં રાખી વાઇ આવે છે કે નહિ તેની પરીક્ષા કરવા ફરમાવ્યું તે પ્રમાણે વરને તેડવા પણ ગયા છતાં મોકલ્યો નહિ. કોણ જાણે હજુ શું થશે. બીજા પણ એવાજ દાખલા મોજુદ છે છતાં કંઇ નીવેડો આવતો નથી એટલે પંચમાં સંભળાવ્યાથી પણ શું વળે. હશે ત્યારે બાઇના કર્મમાં હશે તેમ બનશે. આપણે શું કરીએ ?

શાન્તિ૦—ભાઇ, તમારી ભુલ થાય છે, દેખતા આંખે કુવાગાં પડીએ તો મરવાનાજ. ગાડી આવતી હોય ને અગાડી સુવાથી કપાઇ મરી જાય તે જાણીતું છે. આ સાલે આપણી જ્ઞાતિમાં જે મરણો થયાં છે તે ત્રાસદાયક છે નાની ઊંમરમાંજ બાળાઓને રંડાપા આવ્યા છે. આ બધા **બાળ વિવાહ** અને **બાળ લગ્ન**નેજ આભારી છે તો આપણી જ્ઞાતીમાંથી બાળ વિવાહ અને બાળ લગ્ન થતાં અટકાવવા જોઇએ.

કાન્તી૦—અરે, આપણી સમાજના આગેવાનોના વિચારો પ્રથમ કરતાં કંઇક સુધરેલા છે એટલે આપણી ખરાબ રૂઢીઓ દૂર કરવા પ્રયત્ન કરાય તો જરૂર સમાજની અધોગતિ થતી અટકે અને એ સિવાય લગનમાં ફટાણાં ગીતો ગાવાનો રીવાજ. પંચવલા વખતે પાણી અને ગવાર છાંટવાનો રીવાજ, તેડાં કરવાનો રીવાજ વીગેરે ખરાબ રૂઢીઓ પણ અટકાવવી જોઇએ.

શાન્તિ૦—આપણી સભાના પ્રમુખ સાહેબ વિદ્વાન, કેળવાએલા અને સમાજ હિતૈષી હોવાથી તેઓ આ પત્રમાં તથા અન્ય સ્થળે થતી ચર્ચા પર ધ્યાન રાખતાજ હશે અને આવતી સભાની ઇડરની બેઠકમાં તેઓ શ્રી તથા સમાજ આગેવાન કંઇક અજવાળું પાડી ખરાબ રૂઢીઓ દૂર કરવા બનતું કરતાજ હશે, અને કદાચ તેઓ બનતી લાગવગ વાપરી કદાચ આ સાલની લગનસરા પહેલાં ખરાબ રૂઢીઓ અટકાવશે તોપણ આનંદ થશે. ચાલો મંડળની સભાનો વખત થવા આવ્યો છે. વળી કોઇ વખત મલીશું.—"જયજીનેન્દ્ર" કહી સર્વે ચાલતા થયા. લી. સેવક

"ગુજરાતી જૈન બંધુ"

गृहस्थ धर्म–

दूसरीबार छप चुका है। बाइन्डिग होकर तैयार होगया है। मु० १॥) सजिल्द १॥।)

मगानेका पता—

मैनेजर दिगम्बर जैन पुस्तकालय-सूरत।

पथिककी दो बातें

"गरीबोंके दुःखका भी अनुमान कीजे।
समयका भी सब मिलके सत्कार कीजे॥"
—"जैन-महिलादर्शसे"

सुहावना समय था। प्रकृति अपनी अनोखी लीलासे चित्तको रंगायमान कर रही थी। मेघपटल अनूठा घेरा लगाए हुए थे—सूर्य्यसे प्रखर प्रतापको भी उन्होंने अपने आच्छन्नसे आच्छादित कर दिया था। हम संसारी जीवोंको तो वह हर्षोत्पादक थे ही, पर योगीजनोंको भी अपनी समाधिस्थित आत्माकी पतित परतंत्रावस्थाका भास करानेमें एक खासा उदाहरण था। मेघ क्षणक्षणमें रूप बदलते थे मानो संसारकी नश्वरताका सबक संसारको सिखानेका प्रयत्न कर रहे हों अथवा धृष्ट व बन जमानेकी रफतारको पहिचान उसकीसी ही गतिको धारण किए हुए थे। कुछ भी हो साथमें कभी छोटी कभी बड़ी बूंदोंसे तप्त तापको भी तापहीन ही बनानेका प्रयत्न कर रहे थे। पृथ्वीकी उग्र तप्तावस्थाको शीतलतामें परिणति कर दिया। फलस्वरूप वह भी फूली अङ्ग न समाई और हर्षित हो अपनेको अलंकृतकर सुहागिन स्त्रीके दम्पतिमिलन जैसे आनन्दकी समानता करने लगी। पर पृथ्वीके पल्ले जैसे सरसब्ज अंगन और इन श्यामल जलधरोंने तो मेरे निकट यह प्रकट किया कि प्रकृतिदेवीने संसारके निकट उनके दुःखोंके निवारण हेतु एक खासा पाठ उपस्थित कर दिया है। संसार, तेरे नेत्र हों तो देख! अपने भव्य नेत्रोंको खोल और देख! संसार दुःखोंसे तप्त हैं। उसका वक्षस्थल उसकी धधकती हुई धधकसे धधक रहा है। जिसके कारण उसके अंग पर छाले पड़ गए हैं और वह सिसक रहा है। अभी अभी जरा ही दिनों पहिले दुनियांके इस छोरसे उस छोर तक इस प्रकारकी भावनाएं भाई गई कि भविष्यमें कोई भी संघर्ष हिंसावर्धक न हों। सर्वत्र सर्वथा शान्ति रहे।

इन भावुक हृदयोंने प्रकृति देवीके संदेशको पढ़लिया पर क्या संसारके वर्तमान सबल शासकदल इस भावनाका आदर करेगा? प्रकृति कितनी दयालु है— अपने नियमानुसार जब देखा कि पृथ्वी उग्र तापकी उग्रतासे व्याकुल हो उठी है तो चट अपने जलधरोंको ला उपस्थित किया और उसकी उग्रताकी शान्ति की और सब सलौना ही सलोना दीखने लगा। संसार! क्या तू प्रकृतिकी अवहेलना करेगा? नहीं! तू कर नहीं सक्ता! यदि अपनी तप्तावस्था तुझे खोनी अभीष्ट है तो आ और शीघ्र ही इन जैसे जीते जागते जलधरोंको भेज जो उग्रतापसे तप्त आपसी भ्रम पूर्ण संघर्षमयी मार्गोंको अपने प्रेमसुधासे शीघ्र ही चङ्गे भले करदें और फिर चहुं ओर सब हरा ही हरा दीखने लगे। संसार सर्वत्र सुख शान्तिके सलौने राग पुनः गाने लगे। पौद्गलिक प्रेमका प्रस्थान हो। पावन परमात्माका पुनरुत्थान हो। ऐसे समयमें पवनके झोंकोंमें विचारोंकी हिलोरें लेते पथिक भारतवर्षके एक ग्रामीण रास्ते चलते हुए

अपने चहुंओर के कुछ चलते फिरते हालको बाह्य संकेतोंसे जानता चला। एकी सड़कसे आम्रपंक्तियोंके मध्य हो चले ही जा रहे थे कि दो देहाती-ग्रामीण बालक अपने पशुओंकी रक्षा करते सड़कके बगल खड़े दिखाई पड़े। हृदय उनकी सादगी और पवित्रता की ओर आकर्षित हुआ। छोटासा मोटे खसूटे गाढ़ेका छलूका और उसी पवित्र खद्दरकी घुटनों ऊंची धोती न मालूम सादगीको प्रगट कर रही थी अथवा भारतवर्षकी दरिद्रताको या इन विचारे गरीब किसान भाइयोंकी तीन या चार पैसे रोजकी आमदनीको! ज्यों ही पाससे गुजरा देखा कि पयार व पतेलकी सिरकियोंसे एक घोकी बनाए वर्षासे रक्षार्थ अपने पास रख रक्खी है। अपने विदेशी छाते और Rain Coatको देख हृदय लज्जित हुआ। मानो इन भावोंको उन सरल बालकोंने पढ़ लिया हो—वे बोले—"लेउ तुमहूँ ओढ़े जाहू- हाँ हाँ ओढ़े जाहु" हृदयमें उथल पुथल मच गई। क्या यह सरल ग्रामीण हमको उबारेंगे? इन्हींने तो अभी तक भारतीय प्राचीन रीतियोंको किन्हीं अंशोंमें बनाए रक्खा है! पर दूसरे क्षण उनकी दरिद्रता, ज्ञान शून्यता और मूढताने यह विचार काफूर कर दिए। उनको आवश्यक्ता है ज्ञान प्रदान करनेकी!

कविका यह पद इस समय सहसा मुखमें आ गया। "लेओ स्वदेशी कामली तजकर विदेशी शाल भी। शोभा परम देगी स्वदेशी तरुवरोंकी छाल भी।" अगाड़ी चला देखा कि दो अर्ध नग्न ग्रामीण स्त्रियां इस पानी बरसतेमें ईंधनके गट्ठे सिरपर धरे चलीं जा रही थीं। जितना ही हृदय कुछ देर पहिले संशित और हर्षित हुआ था उतना ही इस दृश्यसे थर्रा गया! अपनी दरिद्रता आंखोंके समक्ष आ गई। यह विश्वास हो गया यह सब दृश्य दरिद्रताके हैं। अपने ही समान पञ्चेन्द्रिय जीवोंको कितना कष्ट है। पर हम धनवान हैं हमको इससे क्या मतलब? क्या यह विचार अब भी दूर न होगा? क्या अब भी सादगी और किफायतको अख्तीयार नहीं किया जायगा? क्या अब भी संयम और दानको नहीं अपनाया जायगा। ईर्ष्या द्वेषको नहीं भगाया जायगा? और स्नेहमयी वात्सल्य अङ्गको गले से नहीं लगाया जायगा? क्या मुनि विष्णुकुमार जैसे निःस्वार्थभावके प्रेम शिक्षापूर्ण कृत्य आपकी उदासीनताको नहीं भगाएंगे? यदि हम जैनी हैं तो क्या उन बातोंमें हमें अग्रसर न होना चाहिए? क्यों न हमारी महासभाके मुखपत्र जैनगजटको अपनी बेसुरी तान अलापना छोड़कर इन प्रेममय निस्वार्थ स्वर्णमय भावोंके प्रचारमें व्यस्त होना चाहिए? आपसी कटुतामयी द्वेषाग्निको मिटाना चाहिए अथवा महासभाके मुखपत्रसे ही उसकी धधकती हुई आगको फैला अपूर्व रीतिसे समाजकी अनोखी रक्षा करनी चाहिए? इन्हीं विचारोंमें डांवाडोल बाहन शहरके बाजारमें चलने लगा! यहांकी टीपटाप और ग्रामकी दरिद्रावस्थाके दृश्योंने दारुण जलन उत्पन्न कर दी! पर संयोगवश जल्दी ही एक गलीमें आजानेसे यह दृश्य नेत्रोंके अगाड़ीसे हट गया। और एक बुढ़ियाको निमग्न हो चर्खेके मीठे स्वर निकलते

देख चित्त जितना उदास हुआ था उससे कहीं अधिक अंशोंमें आल्हादित हुआ। भारतवर्षको दरिद्रावस्था और उसकी हीनावस्थासे उबारनेवाले यह ही सादे स्वतंत्र जीवन बितानेवाले प्रकृति प्रदात्य वृक्षत्रणसे स्वशरीरकी रक्षा करनेवाले, अर्ध नग्न शरीर पर पानीकी बौछारें सहते सिरपर बोझ ढोते अधपेट भूखे रहनेवाले और अपनी दशाका भान रखते हुए **चरखा चलानेवाले ही धन्य हैं**? येही लोग हैं जो भारतवर्षमें इतना अन्न उत्पन्न करते हैं कि आप अधपेट रह अधिकांश जगतको भोजन देते हैं। और यही लोग थे कि अनाजको ॥) मन बेचा था। सत्यनिष्ठाके लिए मेगस्थिनीज़ और एरियन सदृश विदेशी यात्रियोंसे मुक्तकंठसे प्रशंसाको पाते हुए थे। यही लोग थे जो चरखा चला करोड़ों रुपया कमाते थे। और उस सूतसे अद्वितीय कपड़ा बुनकर दुनियामें भारतका नाम रखते थे और अहिंसामई पवित्रताका संदेश भेजते थे। वेनिससाहबने लिखा है कि ढाकेका बना हुआ कपड़ा देखनेसे मालूम होता है जैसे देवताओंने बनाया हो। उसे देखकर यह नहीं मालूम होता कि वह मनुष्यका बनाया हुआ है। क्यों न यह भ्रम हो! उस कपड़ेकी विशुद्धता ही का प्रभाव था कि भारतीय सभ्यताकी प्रशंसा चहुंओर हो रही थी। लोग उसका अनुकरण करते थे। उस समय आधुनिक उच्चकोटीन सभ्यताके जमाने सदृश गऊ रक्त और चर्बी आदिका व्यवहार अपने तन ढकनेके लिए वस्त्र बनानेमें नहीं किया जाता था। लोगोंको धर्मसे गिराया न जाता था। पवित्र जीवन बिताया जाता था। परदेनी मानी विलासताप्रिय सभ्य समाजने उनकी अवहेलना की! उनके इन शुभ कृत्योंसे और आधुनिक दशासे क्या अब भी समाज कुछ शिक्षा ग्रहण करेगी? सादगी और प्रेमसे रहना सीखेगी? और गरीबोंके दुःखोंको हटानेमें अपना हाथ आगे बढ़ायगी? यदि शुद्धताको अपनाया जाय तो खोई हुई शक्तियां पुनः जागृत हो जांय। सोचिए! विचारिए! अपनी अपनी दशा पर ध्यान दीजिए! संसारके अज्ञान अंधकार मेटनेमें अग्रसर होइए! अपनी बुराइयोंको हटाइये जो आपका धार्मिक शारीरिक और आर्थिक ह्रास दिनों दिनों बढ़ा रही हैं। हिन्दी ग्रन्थमालामें लिखा है कि कुल दुनियांकी लड़ाईयोंमें सौवर्षके अन्दर (१७९३से १९००) तक पचास लाख आदमी मारे गए हैं। पर हमारे हिंदुस्तानमें केवल दस वर्षमें (१८९१से १९०१ तक) अकाल और भूखके मारे एक करोड़ नब्बेलाख मनुष्योंने प्राण त्याग किये! भारतवर्षकी इस घटतीको यदि आप रोकना चाहते हैं तो संयम और शुद्धताको अपनाइए और संसारको अपना अलौकिक पवित्र आत्मज्ञानका भान कराईए जिससे भविष्यमें पूर्ण शांतिका साम्राज्य रहे। सर्व देशवासी सुख शांतिसे अपनी आत्माओंका कल्याण करें। वीर प्रभु! हमें ऐसी ही सन्मति प्रदान करें यही भावना है।

के० पी० जन।

पवित्र काश्मीरी केशर–

का भाव २॥) **फी तोला है।**

मिलनेका पता–

मैनेजर, **दि० जैन पुस्तकालय–सूरत।**

दूसरीवार छपकर तैयार होगया।

श्रीमान् जैनधर्मभूषण ब्रह्मचारी शीतलप्रसादजीकृत

हरएक गृहस्थको उपयोगी सर्वोत्तम ग्रन्थ—

गृहस्थधर्म।

जो प्रथमवार बिक जानेपर कई वर्षोंसे नहीं मिलता था दूसरीवार सूरतमें छपकर तैयार हो गया।

गृहस्थधर्ममें कौन २ विषय हैं?

इस महान ग्रन्थके २१ अध्यायोंमें पुरुषार्थ, सम्यक्‌चारित्रकी आवश्यकता, श्रावककी पात्रता, गर्भाधानादि सभी संस्कारका खुलासा व विधि, अजैनको श्रावककी पात्रता, श्रावक श्रेणीमें प्रवेशार्थ प्रारम्भिक श्रेणी, श्रावककी ११ प्रतिमाओंका अलग २ वर्णन, विवाहके पश्चात् गृहस्थके आवश्यक संस्कार, संस्कारित माताका उपाय, गृहस्थी धर्माचरण, समाधिमरण क्रिया, जन्ममरण अशौचका विचार, समयकी कदर, जैनधर्मकी सनातनता व उन्नतिका उपाय, हम क्या खायें व पीयें, नित्यपूजा आदि इतने विषयोंका संग्रह है कि इस ग्रन्थके पढ़नेसे एक जैनी जैनधर्मका सच्चा श्रद्धानी बन सकता है। यज्ञोपवित, विवाह आदिकी विधि भी है। सारांश कि गृहस्थाश्रममें सुख व धर्मरूप रहनेके लिये इस 'गृहस्थधर्म' ग्रन्थ हरएक श्रावकके पास रहना चाहिये। इस एक ही ग्रन्थसे लौकिक, धार्मिक, सामाजिक सभी कार्य सध सकते हैं। पृष्ठ ३१२ मूल्य १॥) डेढ़ रुपया।

और चार नये ग्रंथ तैयार।

श्रीपालचरित्र-तीसरीवार मूल।	॥≈)
जैन इतिहास-प्रथम भाग, दूसरीवार	॥)
आत्मधर्म-(ब्र. शीतलप्रसादजीकृत दूसरीवार)	॥)
मल्लीनाथपुराण-(खुले पृष्ठ, सचित्र)	४)
श्रीपाल नाटक (नवीन बड़े अक्षरोंमें)	१)

मगानेका पता:—

मैनेजर दिगम्बर जैन पुस्तकालय—सूरत।

"जैन विजय" प्रिन्टिंग प्रेस खपाटिया चकला,-सूरतमें मूलचंद किसनदास कापड़ियाने मुद्रित किया और "दिगम्बर जैन" आफिस, चंदावाड़ी-सूरतसे उन्होंने ही प्रकट किया।